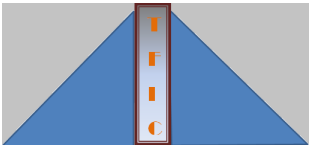

THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

# FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

**If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.**

**-The TFIC Team.**

* ॐ *

सचित्र

# बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह।

मनोहर २१ चित्रों सहित ४२४ पृष्ठों में १६१ चुने हुए
दो भागों में आवश्यक सम्पूर्ण नित्यपाठों का

## अपूर्व संग्रह।


प्रथम भाग के संग्रहकर्त्ता—

खुरई ( सागर ) निवासी मास्टर छोटेलाल जैन।



प्रकाशक—

जैन-साहित्य-मन्दिर, सागर [ म० प्र० ]

ज्येष्ठ १९८३
वीर सं० २४५२ } प्रथमवार { पक्की जिल्द २)
सुनहरी जिल्द २।)

# हमारी छपाई पुस्तकों और चित्रों की सूची।

बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह—[ सचित्र ] अनेक पुस्तकों का संग्रह २)

उपदेश भजन माला—[ सचित्र ] उपदेशप्रद ड्रामा और भजन ≡)

जैन-जीवन-संगीत—[ सचित्र ] मुनि आहार विधि,
चुने हुए अनेक बारहमासों तथा कविताओं का संग्रह =)

मेरी भावना और मेरी द्रव्य पूजा—लाखों प्रतियां छप चुकीं ~)

द्रव्य-संग्रह हिन्दी पद्यानुवाद—[ भैया भगौतीदास कृत ] =)

रत्नकरण्ड श्रावकाचार-हिन्दी पद्यानुवाद—[ पं० गिरधर
शर्मा कृत ] बहुत ही सरल और सुन्दर कविता में ··· =)

जैनस्तव रत्नमाला—सचित्र [ पं० गिरधर शर्मा कृत ]
बारहभावना, सामायिकपाठ, आलोचनापाठ, महावीर,
शान्तिनाथ, पार्श्वनाथ आदि सुन्दर स्तोत्रों का संग्रह -)॥

भगवान पार्श्वनाथ—[ सचित्र ] उपन्यास के ढङ्ग पर बहुत
ही ललित रचना में भगवान का चरित्र लिखा गया है ≡)॥

ढला चला—सुधारकों और स्थितिपालकों का मनोरंजक संवाद -)॥

अतिशयक्षेत्र चांदखेड़ी का इतिहास और पूजन—[सचित्र] =)

प्राकृत षोड़शकारण जयमाला-भाषा टीका—सचित्र, भाषा
टीकामें १६भावनाओंका स्वरूप बड़ी अच्छी तरहसे बताया गया
है, व्रत, कथा उद्यापन की विधि और यंत्र-मंत्र सहित··· ॥)

## चित्र।

हमारे यहाँ हमेशा नये २ भावपूर्ण, पौराणिक तीर्थों मुनियों आदि के चित्र तैयार होते रहते हैं। और बढ़िया चिकने आर्ट पेपर पर उत्तम स्याही में छप ये जाते हैं। प्रत्येक मन्दिरों तथा घरों में लगाकर धर्म-शिक्षा और सजावट दोनों का लाभ उठाइये।

पता:—जैन-साहित्य-मन्दिर, सागर ( म० प्र० )

श्री बाहुबलस्वामी, (श्रवणबेलगोला)।

सर्वाधिकार रक्षित। जैन-साहित्य-मन्दिर, सागर (म० प्र०)

पिसनहारी की मढ़िया, जबलपुर।

5.0

श्रीवीतरागाय नमः

# बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह

## पहिला भाग ।

## रत्नकरण्ड-श्रावकाचार, हिन्दी-पद्यानुवाद ।

( पं० गिरधर शर्मा कृत )

### पहिला परिच्छेद ।

सकल कर्ममल जिनने धोये, हैं वे वर्द्धमान भगवान ।
लोकालोक भासते जिसमें, ऐसा दर्पण जिनका ज्ञान ॥
बड़े चावसे भक्तिभावसे; नमस्कार कर बारंबार ।
उनके श्रीचरणों में प्रणमूं, सुख पाऊँ हर विघ्न-विकार॥१॥
जो संसार दुःखसे सारे, जीवों को सु बचाता है ।
सर्वोत्तम सुखमें पुनि उनको, भलीभाँति पहुँचाता है ॥
उसी कर्मके काटनहारे, श्रेष्ठधर्मको कहता हूँ ।
श्रीसमन्तभद्रार्यवर्यका, भाव बताना चहता हूँ ॥२॥

#### धर्म किसे कहते हैं ।

गणधरादि धर्मेश्वर कहते, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान-
सम्यक्चारित धर्मरम्य है, सुखदायक सब भाँति निदान॥
इनसे उलटे मिथ्या हैं सब, दर्शन ज्ञान और चारित्र ।
भव कारण हैं भय कारण हैं, दुख कारण हैं मेरे मित्र॥३॥

#### सम्यग्दर्शन का लक्षण ।

आठ अंगयुत, तीन मूढ़ता रहित, अमद जो हो श्रद्धान ।
सच्चे देव शास्त्र गुरु पर दृढ़, सम्यग्दर्शन उसको जान ॥
सच्चे देव शास्त्र गुरुका मैं, लक्षण यहाँ बताता हूं ।
तीन मूढ़ता आठ अंग-मद, सबका भेद बताता हूं ॥४॥

सच्चे देव का स्वरूप।

जो सर्वज्ञ शास्त्र का स्वामी, जिसमें नहीं दोष का लेश।
वही आप्त है वही आप्त है, वही आप्त है तीर्थ जिनेश॥
जिसके भीतर इन बातों का, समावेश नहिं हो सकता।
नहीं आप्त वह हो सकता है, सत्य देव नहिं हो सकता॥५॥
भूख प्यास बीमारि बुढ़ापा, जन्म मरण भय राग द्वेष।
गर्व मोह चिन्ता मद अचरज, निद्रा अरति खेद औ स्वेद॥
दोष अठारह ये माने हैं, हों ये जिनमें जरा नहीं।
आप्त वही है देव वही है, नाथ वही है और नहीं॥६॥
सर्वोत्तम पद पर जो स्थित हो, परम ज्योति हो, हो निर्मल।
वीतराग हो महाकृती हो, हो सर्वज्ञ सदा निश्चल॥
आदि रहित हो अन्त रहित हो, मध्य रहित हो महिमावान।
सब जीवों का होय हितैषी, हितोपदेशी वही सुजान॥७॥
बिना रागके बिना स्वार्थके, सत्यमार्ग वे बतलाते।
सुन सुन जिनको सत्पुरुषोंके, हृदय प्रफुल्लित हो जाते॥
उस्तादोंके कर स्पर्शसे जब मृदङ्ग ध्वनि करता है।
नहीं किसी से कुछ चहता है, रसिकों के मन हरता है॥८॥

शास्त्र का लक्षण।

जो जीवोंका हितकारी हो, जिसका हो न कभी खंडन
जो न प्रमाणों से विरुद्ध हो, करता होय कुपथ-खंडन॥
वस्तुरूपको भलीभांतिसे, बतलाता हो जो शुचितर।
कहा आप्तका शास्त्र वही है, शास्त्र वही है सुन्दरतर॥९॥

तपस्वी या गुरु का लक्षण।

विषय छोड़कर निरारंभ हो, नहीं परिग्रह रक्खें पास।
ज्ञान ध्यान तप में रत होकर, सब प्रकार की छोड़ें आस॥

भूल भाल उसको तज देना, या तज देना धार प्रमाद ॥
ऊँचे नीचे आगे पीछे, अगल बगल मित्रो बढ़ना।
दिग्व्रतके अतिचार कहाते, याद न मर्यादा रखना ॥६०॥

अनर्थदण्डविरति।

दिगमर्यादा जो की होवे, उसके भीतर भी बिन काम।
पाप योगसे विरक्त होना; है अनर्थदंडव्रत नाम ॥
हिंसादान प्रमादचर्या, पापादेश-कथन अपध्यान।
त्योंही दुःश्रुति पाँचों ही ये, इस व्रतके हैं भेद सुजान ॥६१॥

हिंसादान।

छुरी कटारी खंग खुनीता, अग्न्यायुध फलसा तलवार।
साँकल सींगी अस्त्र-शस्त्रका, देना, जिनसे होवें वार ॥
हिंसादान नामका मित्रो, कहलाता है अनरथदंड।
बुधजन इसको तज देते हैं, ज्यों नहिं होवें युद्ध प्रचंड ॥६२॥

प्रमादचर्या।

पृथ्वी पानी अग्नि वायुका, बिना काम आरंभ करना।
व्यर्थ छेदना वनस्पतीको, बे-मतलब चलना फिरना ॥
औरों को भी व्यर्थ घुमाना, है प्रमाद चर्या दुखकर।
कहा अनर्थदंड है इसको, शुभ चाहे तो इससे डर ॥६३॥

पापोपदेश या पापादेश।

जिससे धोखा देना आवे, मनुज करे त्यों हिंसारम्भ।
तिर्यंचोंको संकट देवे, वणिज करे फैलाकर दम्भ ॥
ऐसी ऐसी बातें करना, पापादेश कहाता है।
इस अनर्थदंडकको तजकर, उत्तम नर सुख पाता है ॥६४॥

अपध्यान।

रागद्वेष के वसमें होकर, करते रहना ऐसा ध्यान।
उसकी प्रिया मुझे मिल जावे, मिल जावें उसके धनधान ॥
वह मर जावे वह कट जावे, उसको होवे जेल महान।
वह लुट जावे संकट पावे, है अनर्थदंडक अपध्यान ॥६५॥

दुःश्रुति।

जिनके कारण से जागृत हों, राग द्वेष मद काम विकार।
आरंभ साहस और परिग्रह, त्यों छावें मिथ्यात्वविचार॥
मन मैला जिनसे हो जावे, प्यारो सुनना ऐसे ग्रन्थ।
दुःश्रुति नाम अनर्थ कहाता, कहते हैं ज्ञानी निर्ग्रंथ॥ ६६॥

अनर्थदण्डव्रतके अतिचार।

स्मराधीन हो हँसी दिल्लगी-करना भंडवचन कहना।
बकबक करना आंख लड़ाना, कायकुचेष्टा में बहना॥
सजधज के सामान बढ़ाना, विना विचारे त्यों प्रियवर-।
तनमनवचन लगाना कृतिमें, हैं अतिचार सभी व्रतहर॥६७॥

भोगोपभोगपरिमाण।

इन्द्रिय-विषयों को प्रतिदिन ही, कम कर राग घटा लेना।
है व्रत भोगोपभोगपरिमित, इसकी ओर ध्यान देना॥
पंचेन्द्रिय के जिन विषयों को भोग छोड़ दें वे हैं भोग।
जिन्हें भोगकर फिर भी भोगें मित्रो वे ही हैं उपभोग॥६८॥
त्रस जीवों की हिंसा नहिं हो-होने पावे नहीं प्रमाद।
इसके लिये सर्वथा त्यागो, मांस मद्य मधु छोड़ विषाद॥
अदरख निम्बपुष्प बहुबीजक, भक्खन मूल आदि सारी।
तजो सचित चीजें जिनमें हो, थोड़ा फल हिंसा भारी॥६९॥
जो अनिष्ट हैं सत्पुरुषों के- सेवन योग्य नहीं जो है।
उन विषयों को सोच समझकर, तज देना जो व्रत सो है॥
भोग और उपभोग त्याग के, बतलाये यम नियम उपाय।
अमुक समयतकत्याग 'नियम' है, जीवन भरका यम कहलाय७०

नियम करने की विधि।

भोजन वाहन शयन स्नान रुचि, इत्र पान कुंकुम-लेपन।
गीत वाद्य संगीत कामरति, माला भूषण और वसन॥

इन्हें रात दिन पक्ष मास या, वर्ष आदि तक देना त्याग।
कहलाता है 'नियम' और 'यम,' आजीवन इनका परित्याग७१

भोगोपभोगपरिमाणके अतिचार।

विषय विषों का आदर करना, भुक्त विषय को करना याद।
वर्तमान के विषयों में भी, रचे पचे रहना अविषाद॥
आगामी विषयों में रखना, तृष्णा या लालसा अपार।
बिन भोगे विषयों का अनुभव करना, ये भोगातिचार॥७२॥

## पांचवां परिच्छेद।

शिक्षाव्रत—देशावकाशिक।

पहला है देशावकाशि पुनि, सामायिक प्रोषध उपवास-।
वैयावृत्य और ये चारों, शिक्षाव्रत हैं सुख-आवास॥
दिग्व्रत का लम्बा चौड़ा स्थल, कालभेद से कम करना।
प्रतिदिन व्रत देशाविकाश सो, गृही जनों का सुखझरना॥७३॥
अमुक गेह तक अमुक गली तक, अमुक गांव तक जाऊंगा।
अमुक खेत से अमुक नदी से, आगे पग न बढ़ाऊंगा॥
एक वर्ष छहमास मास या, पखवाड़ा या दिन दो चार।
सीमाकाल भेदसे श्रावक, इस व्रत को लेते हैं धार॥ ७४॥
स्थूल सूक्ष्म पांचों पापों का, हो जाने से पूरा त्याग।
सीमा के बाहर सध जाते, इस व्रत से सु महाव्रत आप॥
हैं अतिचार पांच इस व्रत के, मँगवाना प्रेषण करना।
रूप दिखाय इशारा करना, चीज फैंकना, ध्वनि करना॥७५॥

सामायिक।

पूर्ण रीति से पञ्च पाप का, परित्याग करना सज्ञान।
मर्यादा के भीतर बाहर, अमुक समय धर समता ध्यान॥
है यह सामायिक शिक्षाव्रत, अणुव्रतों का उपकारक।
विधि से अनलस सावधान हो, बनो सदा इसके धारक॥७६॥

तन जीभ नाक आंख कान ये ही पंचइन्द्री, जाके जे ते होय ताहि तेसो सर्दहीजिये। संख द्वै पिपीलि तीन भौंर चार नर पंच, इन्हें आदि नाना भेद समुझि गहीजिये ॥ ११ ॥

पंच इन्द्री जीव जिते ताके भेद दोय कहे, एकनिके मन एक मनविना पाइये। और जगवासी जंतु तिनके न मन कहूँ, एकेंद्री बेइन्द्री तेंद्री चौइन्द्री बताइये ॥ एकेंद्रीके भेद दोय सूक्षम बादर होय, पर्यापत अपर्याप्त सबै जीव गाइये। ताके बहु विस्तार कहे हैं जु ग्रन्थनि में, थोरे में समुझि ज्ञान हिरदै अनाइये ॥ १२ ॥

चउदह मारगणा चउदह गुणस्थान,होंहिं ये अशुद्ध नय कहे जिनराजने। येही भाव जोलों तोलों संसारी कहावै जीव, इनको उलंघनकरि मिलै शिव साजने ॥ शुद्धनै विलोकियेतौ शुद्ध है सकलजीव, द्रव्यकी उपेक्षा सेा अनन्त छवि छाजने। सिद्धके समान ये विराजमान सबै हंस, चेतना सुभाव धर करें निज काजनै ॥ १३ ॥

अष्टकर्महीन अष्ट गुणयुत चरमसु, देह तातें कछु ऊनो सुख को निवास है। लोकको जु अग्र तहां स्थित है अनन्त सिद्ध, उत्पादव्यय संयुक्त सदा जाको बास है ॥ अनन्तकाल पर्यंत थिति है अडोल जाकी, लोकालोकप्रतिभासी ज्ञानको प्रकाश है। निश्चै सुखराज करै बहुरि न जन्म धरै, ऐसो सिद्ध राशनि को आतम विलास है ॥ १४ ॥

प्रकृति औ थितिबन्ध अनुभाग बंधपरदेशबन्ध एई चार बन्ध भेद कहिये। इन्हीं चहुँ बन्धतैं अबन्ध ह्वै के चिदानन्द, अग्निशिखा सम ऊर्द्धको सुभावी लहिये॥ और सब जगजीव तजैं निज देह जब, परभोको गौन करै तबै सर्ल गहिये। ऐसैं ही अनादिथिति नई कछू भई नाहिं, कही ग्रन्थमांहि जिन तैसी सरदहिये ॥ १ ॥

( इति जीवस्य नवाधिकाराः )

अजीवदरव पंच ताके नांव भिन्न सुनो, पुद्गल औ धर्मद्रव्यको सुभाव जानिये। अधर्म द्रव्य आकाश द्रव्य काल दर्व एई, पांचों द्रव्य जग में अचेतन बखानिये॥ तामें पुग्गल है मूरतीक रूप रस गन्ध, पर्शमई गुणपरजाय लिये जानिये। और पंच जीव जुत कहे हैं अमूरतीक, निज निज भाव धर भेदी हूँ पिछानिये॥ १५॥

शब्द बन्ध सूक्षम थूल औ आकार रूप, हूवो मिलिबो औ बिछुरिबो धूप छाय है। अंधारो उजारो औ उद्योत चन्द्रकांतिसम, आतप सु भानु जिम नाना भेद छाय है॥ पुद्गल अनन्त ताकी परजाय हू अनन्त, लेखो जो लगाइये तोऽनंतानन्त थाय है। एकही समैंमें आय सब प्रतिभास रही, देखी ज्ञानवंत ऐसी पुद्गल प्रजाय है॥ १६॥

जब जीव पुद्गल चलै उठि लोकमध्य, तबै धर्मास्तिकाय सहाय आय होत है। जैसें मच्छ पानी माहिं आपुहीतैं गौन करे, नीरकी सहाय लेती अलसता खोत है॥ पुनि यों नहीं जो पानी मीन को चलावे पंथ, आपुहीतैं चलै तो सहाय कोऊ नोत है। तैसें जीव पुद्गलको और न चलाय सके, सहजै ही चलै तो सहायका उदोत है॥ १७॥

जीव अरु पुद्गलको थितिसहकारी होय, ऐसो है अधर्मद्रव्य लोकताईं हद है। जैसे कोऊ पथिक सुपंथमध्य गौन करे, छाया के समीप आय बैठे नेकु तद है॥ पैं यों नहीं जु पंथी को राखतु बैठाय छाया, आपुने सहज बैंठे बाको आश्रैपद है। तैसें जीव पुद्गलं को अधर्मास्तिकाय सदा, होत है सहाय 'भैया' थितिसमैं जद है॥ १८॥

जीव आदि पंच पदार्थनिको सदाही यह, देत अवकाश तातैं आकाश नाम पायो है। ताके भेद दोय कहे एक है अलो-

काकाश, दूजो लोकाकाश जिन ग्रन्थनिमें गायो है ॥ जैसें
कहूं घर होय तामें सब बसें लोग, तातें पंचद्रव्यहूको सदन
बतायो है । याहीमें सर्व रहे पै निज निज सत्ता गहै, तातें
परें और सो अलोक ही कहायो है ॥ १९ ॥

जितने आकाशमाहिं रहैं ये दरबपंच, तितने अकाश
को जु लोकाकाश कहिये । धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य कालद्रव्य
पुद्गल,-द्रव्य जीव द्रव्य एई पांचों जहां लहिये ॥ इनतें अधिक
कछु और तो विराज रह्यो, नाम सो अलोकाकाश ऐसो सर-
दहिये । देख्यो ज्ञानवंतन अनन्तज्ञान चक्षु करि, गुनपरजाय
सो सुभाव शुद्ध गहिये ॥ २० ॥

जोई सर्वद्रव्यको प्रवर्त्तावन समरथ, सोई कालद्रव्य
बहुभेदभाव पाइई । निज निज परजाय विषैं परणवे यह, काल
को सहाय पाय करे निज काजई ॥ ताही कालद्रव्य* के
विराज रहे भेद दोय, एक व्यवहार परिणाम आदि छाजई ।
दूजो परमार्थकाल निश्चयवर्त्तना चाल, कायतें रहित लोका-
काशकों सुगाजई ॥ २१ ॥

लोकाकाश के जु एक एक परदेश विषैं, एक एक काल
अणु सुविराज रहे हैं । तातें काल अणु के असंख्यद्रव्य कहि-
यतु, रतन की राशि जैसें एक पुंज लहे हैं ॥ काहूसों न मिलें
कोई रतनजोत दृष्टि जोई, तैसें काल अणु होय भिन्नभाव गहे
हैं । आदि अन्त मिले नाहिं वर्त्तना सुभाव मांहिं, समे पल
महूर्त्त परजाय भेद कहे हैं ॥ २२ ॥

दोहा ।

जीव अजीवहि द्रव्य के, भेद सुषट्विध जान ।
तामें पंच सु काय धर, कालद्रव्य विन मान ॥ २३ ॥

*'यमराजके' ऐसा भी पाठ है ।

इहविधि अनेक गुण प्रगट करि, लहै सुशिवपुर पलकमें।
चिद्विलास जयवंत लखि, लेहु 'भविक' निज झलक में ॥ २ ॥

दोहा।

द्रव्यसंग्रह गुण उदधिसम, किहँविधि लहिये पार।
यथाशक्ति कछु वरणिये निजमति के अनुसार ॥३ ॥

चौपाई १५ मात्रा.

गाथा मूल नेमिचँद करी। महा अर्थनिधि पूरण भरी॥
बहुश्रुत धारी,जे गुणवंत। ते सब अर्थ लखहिं विरतंत ॥४॥
हमसे मूरख समझैं नाहिं। गाथा पढ़ै न अर्थ लखाहिं ॥
काहू अर्थ लखे बुधि ऐन। बांचत उपज्यो अति चितचैन॥५॥
जो यह ग्रंथ कवितमें होय। तौ जगमाहिं पढ़ै सब कोय॥
इहिविधि ग्रंथ रच्यो सुविकास। मानसिंह व भगोतीदास॥६॥
संवत सत्रहसे इकतीस। माघसुदी दशमी शुभदीस ॥
मंगल करण परमसुखधाम। द्रवसंग्रहप्रति करहुँ प्रणाम ॥७॥

इति श्रीद्रव्यसंग्रहमूलसहित कवित्तबंध समाप्तः।

---

पुण्य-पाप-फल। [ कवित्त ]

ग्रीषम में धूप परै तामें भूमि भारी जरै,
फूलत है आक पुनि अति ही उमहिकैं।
वर्षाऋतु मेघ झरै तामें वृक्ष केई फरै,
जरत जवासा अघ आपुहीतैं डहिकैं ॥
ऋतु को न दोष कोऊ पुण्य पाप फलै दोऊ,
जैसें जैसें किये पूर्व तैसें रहै सहिकैं।
केई जीव सुखी होहिं केई जीव दुखी होहिं,
देखहु तमासो 'भैया' न्यारे नेकु रहि कैं ॥

# द्रव्यसंग्रह-मूल।

[ श्रीमन्नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती कृत ]

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं। देविंदविंद वंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥ जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो। भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढ गई ॥ २ ॥ तिक्काले चदुपाणा इंदिय बलमाउ आणपाणो य। ववहारा सो जीवो णिच्चयणयदो दु चेदणा जस्स ॥ ३ ॥ उवओगो दुवियप्पो दंसणं णाणं च दंसणं चदुधा। चक्खू अचक्खू ओही दंसणमध केवलं णेयं ॥४॥ णाणं अट्ठ वियप्पं मदिसुदओही अणाणणाणाणि। मणपज्जय केवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च ॥ ५ ॥ अट्ठ-चदुणाणदंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं। ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं ॥ ६ ॥ वण्ण रस पञ्च गंधा दो फासा अट्ठ णिच्चया जीवे। णो सति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो ॥ ७ ॥ पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्चयदो। चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥ ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फलं पभुंजेदि। आदाणिच्चयणयदो चेदणभावं खु आदस्स ॥ ९ ॥ अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा। असमुहदो ववहारा णिच्चयणयदो असंखदेसो वा ॥ १० ॥ पुढविजलतेउवाऊवणप्फदी विविहथावरेइंदी। विगतिग चदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी ॥ ११ ॥ समणा अमणा णेया पंचेन्दिय णिम्मणापरे सव्वे। बादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य ॥ १२ ॥ मग्गणगुणठाणेहिं य चउदसहिं हवंति तह असुद्धणया। विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥ १३ ॥ णिक्कम्मा अट्ठगुणा

किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा। लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादव-येहिं संजुत्ता ॥ १४ ॥ अज्जीवो पुण णेओ पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं। कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥ १५ ॥ सद्दो बंधो सुहमो थूलो संठाणभेदतमछाया। उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥ १६ ॥ गइपरि-णयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी। तोयं जह मच्छाणं अच्छंताणेव सो णेई ॥ १७ ॥ ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गल जीवाण ठाण सहयारी। छाया जय पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई ॥ १८ ॥ अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं। जेणं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥ १९ ॥ धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये। आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो ॥ २० ॥ दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो। परिणामादीलक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो ॥ २१ ॥ लोयायासपदेसे इक्केक्के जे ठिया हु इक्केक्का। रयणाणं रासीमिव ते कालाणू असंख-दव्वाणि ॥ २२ ॥ एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददोदव्वं। उत्तं कालविजुत्तं णायव्वा पंच अत्थिकाया दु ॥ २३ ॥ संति जदो तेणेदे अत्थीति भणंति जिणवरा जम्हा। काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥ २४ ॥ होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे। मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ ॥ २५ ॥ एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदे-सदो होदि। बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥ २६ ॥ जावदियं आयासं अविभागी पुग्गलाणुवट्ठद्धं। तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं॥ २७ ॥ आसवबन्धण-संवरणिज्जरमोक्खा सुपुण्णपावा जे। जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो ॥ २८ ॥ आसवदी जेण कम्मं परिणा-

कलकी बात रही कल ऊपर, भूल अभी की जावे ॥ मत०
पीनेवाला—भंग नहीं यह शिव की बूटी, अजर अमर है करती।
जन्म जन्म के पाप नशा कर सब रोगों को हरती॥चलो०
विरोधी—भंग नहीं यह विष की पत्ती, करे मनुष को ख्वार।
जीते जी अन्धा कर देती, फिर नर्कों दे डाल ॥ मत०
पीनेवाला—कुण्डो में खुद बसें कन्हैया, औ सोटे में श्याम।
विजया में भगवान बसे हैं, रगड़ रगड़ में राम ॥ चलो०
विरोधी—अरे भंग के पीनेवाले भङ्ग बुद्धि हरलेत।
होशयार औ चतुर मर्द को, खरा गधा कर देत ॥ मत०
पीनेवाला—झूठी बातें फिरे बनाता, ले पी थोड़ी भंग।
एक पहर के बाद देखना कैसा छावै रंग ॥ चलो०
विरोधी—लानत इस पर, लानत तुझ पर, चल चल होजा दूर।
भंग पिये भंगड़ कहलावे अरे पातकी क्रूर ॥ मत०
पीनेवाला—भंग के अद्भुत मजे को तूने कुछ जाना नहीं।
रंग को इसके जरा भी मूढ़ पहचाना नहीं ॥
आंख में सुरखी का डेरा मन में मौजों की लहर।
शांति आनँद बिन इसी के कोइ पा सकता नहीं ॥
(चलत) साधू संत भङ्ग सब पीते क्या कंगाल अमीर!
ईश्वर से लोलीन करावै ये इसकी तासीर ॥ चलो०
विरोधी—है नहीं यह भङ्ग कातिल अक्ल को तलवार है।
बेहोश करती है यही जानों महा मुरदार है ॥
खौफ जिनको नर्क का है वह इसे छूते नहीं।
बात सच मानो हमारी नर्क का यह द्वार है ॥
(चलत) यह सब झूठी बातें भाई भंग नरक में डाले।
आखें खोल जगत में देखो लाखों काम बिगाड़े ॥ मत०
पीनेवाला—सुनकर यह उपदेश तुम्हारा हमें हुआ आनंद।

लो मैं छोड़ी भंग आज से ईश्वर की सौगन्द ॥ मत०
विरोधी—भला किया ये काम आपने दई भंग जो छोड़।
सब से नियम कराओ अब तो कुंडी सोटा फोड़ ॥ मत०
पीनेवाला—कुंडी फोड़ूं सोटा तोड़ूं भङ्ग सड़क पर डारूं।
मत पीना अब भङ्ग भाइयो बारम्बार पुकारूं ॥ मत०

## हुक्का का ड्रामा।

हुक्केबाज—आहाहा क्या अच्छा हुक्का है।
है कोई हुक्के का पीने वाला ॥
(चलन) क्या हुक्का बनाये आला, भर भर पीलो तुम लाला।
जो पीवें इसे पिलावें वह लुत्फ ज़िन्दगी पावें ॥
विरोधी—बुरी आदत है यह भाई मत इसकी करो बड़ाई।
दूर दूर हो लानत लानत क्यों बनता सौदाई, ॥
यह तन को खूब जलावे, बलग़म को बहुत बढ़ावे,
जो मुंह से इसे लगावे, ना लज़्ज़त कुछ भी पावे ॥
हुक्के बाज—जिसको इक चिलम पिलाई बलगम की करी सफाई।
विरोधी—दूर दूर हो लानत लानत क्यों बनता सौदाई ॥
हुक्केबाज—क्या हुक्का बना यह आला, भरभर पीलो तुम लाला।
जो पीवें इसे पिलावें वह अकल मन्द कहलावें ॥
विरोधी—जो हुक्के का दम लावें, ले चिलम आग को जावें।
सौ सौ गाली फिर खावें यह मान बड़ाई पावें ॥
हुक्केबाज—यह कैसी बात बनाई कुछ कहते शरम न आई।
विरोधी—दूर दूर हो लानत लानत, क्यों बनता सौदाई ॥
हुक्केबाज—क्या खूब बना यह आला, गङ्गाजल इसमें डाला।
पीते हैं अदना आला, यह घट में करे उजाला ॥
विरोधी—क्या खाक बना यह आला, दिल जिगर करे सब काला।

अच्छा यह नशा निकाला, दोज़ख में गिराने वाला
हुक्केबाज—यह महफिल का सरदार, क्या जाने मूढ़ गंवार।
विरोधी—कब तक कि हुक्का नोशी मुहल्ला जगाओगे।
बंशी बजा के नाग को कबतक खिलाओगे॥
एक दिन यह मारे आस्तीं डसेगा बस तुम्हें।
पंजे से ऐसे देव के बचने न पाओगे॥
गर चाहते हो जिन्दगी तो इसको तरक करो।
खुद अपना बरना खिरमने हस्ती जलाओगे॥
(चलत)—जिन इससे प्रीति लगाई, आखिर में हुई दुखदाई।
मान कहा क्यों पागल बनता कहां गई चतुराई॥ मत०
हुक्केबाज—तेरी मान नसीहत छोड़ूं, ले अभी चिलम को तोड़ूं।
नहचे को तोड़ मरोड़ूं, हुक्के को जमी से फोड़ूं॥
ना पीऊं कभी यह हुक्का, लानत लानत यह हुक्का।
न पियेा कोई यह हुक्का, बेशक लानत यह हुक्का॥

## सिगरेट का ड्रामा।

पीनेवाला—यारो मुझे सिगरेट या बीड़ी दिलाना।
बीड़ी दिलाना, माचिस लगाना कैसा यह फैशन बना॥
विरोधी—शेम २—छोड़ो जरा सिगरेट का पीना पिलाना।
पीना पिलाना दिल को जलाना नाहक क्यों करते गुनाह॥
पीने-दूर२-है जेब खाली डिबिया भी खाली छूटता नहीं यह नशा।
विरोधी-शेम२मदिरा पड़ो इसमें लीद भरीहै लानतहै लानतहै नशा॥
पीने-दूर२ बातें हैं कैसी दीवानों यह जैसी गप शपलगातेहो क्या।
विरोधी-शेम२-होवेगी ख्वारी नरकों की तैयारी हटको तोत्यागो जरा
पीने-दूर२-पीवो पिलावो जरा मुहको लगावो कैसा यह शीरीं अहा
विरोधी-शेम२-शोएल पुकारे जिन दास प्यारे सोचो तो दिल मेंजरा

बैरी मेरे बहुत से, जो होवें इस जगत में।
उनसे क्षमा कराऊँ, तब प्राण तन से निकले ॥ ३ ॥
परिग्रह का जाल मुझपर, फैला बहुत है स्वामी।
उससे ममत्व टूटे, जब प्राण तन से निकले ॥ ४ ॥
दुष्कर्म दुख दिखावें, या रोग मुझ को घेरें।
प्रभु का ध्यान छूटे, जब प्राण तन से निकले ॥ ५ ॥
इच्छा क्षुधा तृषा की, होवे जो उस घड़ी में।
उनको भी त्याग कर दूँ, जब प्राण तन से निकले ॥ ६ ॥
ऐ नाथ अर्ज़ करती विनती पै ध्यान दीजे।
होवे सफल मनोरथ, जब प्राण तन से निकले।
होवे समाधि पूरी तब प्राण तन से निकले ॥ ८ ॥

---

## वेश्या कुटलाई।

मत करो प्रीति वेश्या विष बुझी कटारी। है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ टेक ॥ औषधि अनेक हैं सर्प डसेकी भाई। पर इसके काटेकी नहिं कोई दवाई ॥ गर लगे बान तो जीवित हू रहि जाई। पर इसके नैनके बानसे होय सफाई ॥ है रोम रोम विष भरी करो न यारी। है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥१॥ यह तन मन धन हर लेय मधुर बोली में। बहुतों का करै शिकार उमर भोली में ॥ कर दिये हजारों लोटपोट होली में। लाखोंका दिलकर लिया कैद चोली में ॥ गई इसी कर्म में लाखों की ज़मीदारी। है यही सकल रोगन की खान हत्यारी ॥२॥ हो गये हजारोंके बल वीर्य्य छारा। लाखों का इसने वंश नाश कर डारा ॥ गठिया प्रमेह आतिश ने देश बिगारा। भारत गारत हो गया इसीका मारा ॥ कर दिये हजारों इसने चोर अरु जुवारी। है यही सकल दुर्गुणकी खान हत्यारी ॥ ३ ॥ इसही ठगनीने मद्य मांस सिखलाया। सब धर्म कर्मको इसने धूर मिलाया ॥ और दया

क्षमा लज्जा को मार भगाया। भक्तीका मूल नाश करवाया। हों इसके उपासक रौरव के अधिकारी। है यही० ॥ ४ ॥ वह नव युवकोंको नैन सैनसे खावे। और धनवानों को चट्ट गट्ट कर जावे ॥ धन हरण कर फिर पीछे राह बतावे। करे तीन पांच तो जूते भी लगवावे ॥ पिटवा कर पीछे लयावै पुलिस पुकारी। है यही० ॥५॥ फिर किया पुलिस ने खूब अतिथि सत्कारा। हो गई सजा मिला मजा इश्क का सारा ॥ जो झूठ होय तो सज्जन करो विचारा। दो त्याग झूठ करो सत्य वचन स्वीकार ॥ अब तजो कर्म यह अति निन्दत दुखकारी। है यही सकल रोगोंकी खानि हत्यारी ॥ ६ ॥

## शील के भेद।

ये भेद शील के जानो जो हो सतवंती नारी—टेक
पर पुरुषों से बात न करना, पिंडुक जन का साथ न करना—
पर घर वासा रात न करना, काम कथा मत गारी ॥ जो हो०
इक आसन पर कभी न बैठो, पर पुरुषों के साथ न सेठो—
पिता भ्रात पति को तुम भेंटो, बनो कुटुम की प्यारी ॥ जो हो०
पर पुरुषों के अंग न निरखो, अँग कीर्ती सुन मत हर्षो—
कुटिल सरल को मन से परखो, तू नीची नजर रखारी ॥ जो हो०
हाट बाट में खड़ी न होना, इकले घर में जाय न सोना—
जैनी, समय व्यर्थ ना खोना, लज्या से सुयश बढ़ारी ॥ जो हो०

## कन्या विनय करै हैं।

अब करो विचार, कन्या विनय करै हैं ॥ अज्ञान महा नदि भारी, हम डूब रहीं अब सारी। तुम करो उबार, कन्या विनय करै हैं ॥ अज्ञान तिमिर अँधियारी, अब छाई कारी कारी। तुम करो उजार, कन्या विनय करै हैं ॥ विद्या इस जग में प्यारी, सुख देती हमको भारी—तुम करो प्रचार, कन्या विनय करै हैं ॥ बिगड़ी है दशा

हमारी, तुम चेतो सब ही नारी। तुम करो सुधार, कन्या विनय करै हैं॥ तुम घोर अविद्या टारो, अब अपनी दशा सुधारो। त्यागो कुविचार, कन्या विनय करै हैं॥ विषयों से करके यारी, क्यों अपनी दशा बिगारी। करो जल्दी उपकार, कन्या विनय करै हैं॥ सती अंजना गयी निकारी, वह रोती आँसू ढारी। अब लगा शील में दाग, कन्या विनय करै हैं॥ ये शील महातम भारी. वन में भी हुआ सुखारी। फिर मिल गये कुमार, कन्या विनय करै हैं॥ हा सीता शील अपारी, कूदी थी अग्नि-मँझारी। हुई अग्नि जल धार, कन्या विनय करै हैं॥ मैं विनय करूँ कर जोरी, सुन लेा माताओ मेरी। करो शिक्षा संचार, कन्या विनय करै हैं॥

---

## खुशामद का भजन।

खुशामद ही से आमद है. बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
महाराज ने कहा एक दिन, बैंगन बड़ा बुरा है।
खुशामदी ने कहा, तभी तेा, वे-गुन नाम पड़ा है॥
खुशामद से सब कुछ रद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
महाराज कुछ देर में बेाले, बैंगन तेा अच्छा है।
खुशामदी ने कहा तभी तेा, शिर पर मुकुट धरा है॥
खुशामद में इतना मद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
स्वामी दिन को रात कहे तेा, वह तारे चमका दें।
यदि वह रात को दिन कह दें तेा, सूरज भी दिखलादें॥
खुशामद की भी कुछ हद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
स्वामी कहें मद्य कैसा है? कहें सुरा सुखकर है।
स्वामी पूछें हिंसा जायज? कह दें जीव अमर है॥
बुरा है भला, भला वह है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक

दया का असर ही नहीं।

कैसे प्राणी के प्राणों का घात करे तेरे दिल में दया का असर ही नहीं ॥ जो तू हिरनों का वन में शिकार करे क्या निगोद नरक का खतर ही नहीं ॥ टेक ॥ जैन बानी सुनो, ज़रा ग़ौर करो, जान औरों की अपनी सी ध्यान धरो, ज़रा रहम करो, अपने दिल में डरो, प्यारे ज़ुलम का अच्छा समर ही नहीं ॥ १ ॥ भोले वन के पखेरू हैं डरते फिरें, मारे डरके तुम्हारे से दूर रहें। वो तुम्हारा न कोई बिगाड़ करें, उनका वन के सिवा कोई घर ही नहीं ॥ २ ॥ तृण घास चर अपना पेट भरें, धन देश तुम्हारा न कोई हरें। प्यारे बच्चों से अपने वा प्रीती करें, उनके दिल में तो कोई भी शर ही नहीं ॥ ३ ॥ कामी लोगों ने इसको रवां है किया, झूठा अपनी तरफ से है मसला घड़ा। वरना पुरान कुरान में जीवों के मारन का, आता कहीं भी ज़िकर ही नहीं ॥ ४ ॥ दयामई है धरम सत जानो सही, जिन राज ने है यह बात कही। सुनो न्यामत बिना जिन धर्म कभी प्यारे होगा मुकत में घर ही नहीं ॥ ५ ॥

झूठा है संसार।

झूठा है संसार आँख खोल कर देखो ॥ टेक ॥
जिसे कहता मेरा २ नहीं तू मेरा मैं तेरा मतलबी है संसार ॥ १ ॥ जीतेजी के सब साथी, क्या घोड़ा ऊंट और हाथी, बताये क्या परिवार ॥ २ ॥ जब काल अचानक आवे, तब कंठ पकड़ ले जावे, चले न कुछ तकरार ॥ ३ ॥ यहाँ बड़े २ योधा आये, सब ही को काल ने खाये, समझ तू मूर्ख गंवार ॥ ४ ॥ यह सुपने कैसी माया, क्यों देख मार्ग में आया, बिनस जाय लगे न वार ॥ ५ ॥ क्यों मोह नींद में सोवे, और जन्म वृथा क्यों खोवे, मिले न बारंबार ॥ ६ ॥ जो प्रभुजी का गुण गावे, सो जन्म सफल हो जावे, यह जोहर कहे पुकार ॥ ॥

श्रीमान पूज्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी। बाबा भागीरथजी वर्णी। पं० दीपचन्द्रजी वर्णी।

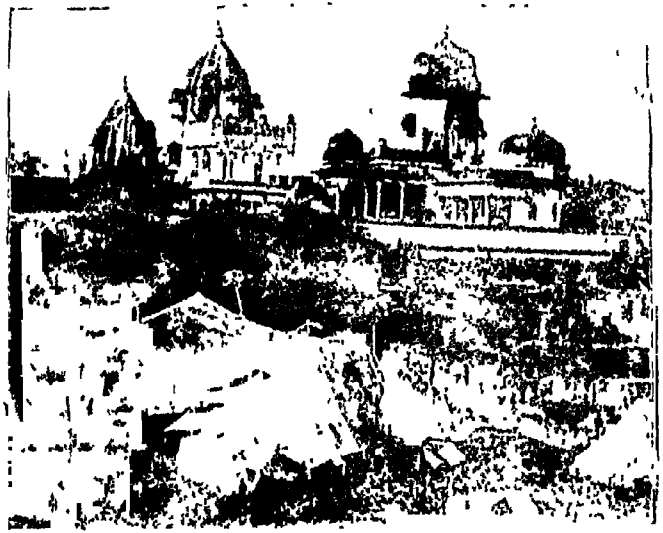

चतुर्मास का दृश्य। क्षेत्रपाल-ललतपुर।

पयानी। भव डूबत बोधे प्राणी, जिन ये वसन्त जिय जानी॥ चेतन सेा खेलें होरी, ज्ञान पिचकारी, योग जल लाके ॥११॥ जिन०

जबलगे महीना फाग. करें अनुराग, सभी नरनारी। ले फिरे फैंटमें कर गुलाल पिचकारी॥ जब श्रीमुनिवर गुणखान अचल धर ध्यान, करें तप भारी। कर शील सुधारस कर्मन ऊपर डारी॥

(झड़)—कीर्ति कुम कुमें बनावैं, कर्मोंसे फाग रचावें। जो बारामासा गावैं, सेा अजर अमर पद पावैं॥ यह भावैं जीया-लाल, धर्म गुणमाल, योग दर्शाके॥ १२॥ जिन अथिर लखा०

## बारहमासा-राजुल।

राग मरहठी [झड़ी]

मैं लूंगी श्रीअरहन्त, सिद्ध भगवन्त, साधु सिद्धान्त चारका सरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—॥ टेक

आषाढ़ मास (झड़ी)

सखि आया अषाढ़ घन घोर, मोर चहुंओर, मचा रहे शोर इन्हें समझावो। मेरे प्रीतम की तुम पवन परीक्षा लावो॥ हैं कहां मेरे भरतार, कहां गिरनार, महाव्रत धार बसे किस बन में। क्यों बांध मोड़ दिया तोड़ क्या सोची मन में॥

(झर्बटें)—न जारे पपैया जारे, प्रीतमको दे समझारे। रहिनों भव संग तुम्हारे, क्यों छोड़ दई मझधारे॥

(झड़ी)—क्यों बिना दोष भये रोष, नहीं सन्तोष, यही अफसोस बात नहिं बूझो। दिये जादों छप्पन कोड़ छोड़ क्या सूझी। मोहिं राखो शरण मंझार, मेरे भर्तार, करो उद्धार, क्यों दे गये झुरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—

श्रावण मास (झड़ी)

सखि श्रावण संवर करे, समन्दर भरे, दिगम्बर धरे क्या

करिये। मेरे जी में ऐसी आवे महाव्रत धरिये। सब तजूं हार शृंगार, तजूं संसार. क्यों भव मंझार में जी भरमाऊं। फिर पराधीन तिरिया का जन्म नहिं पाऊं॥

(झर्वटैं) सबसुन लो राजदुलारी। दुख पड़गया हम पर भारी। तुम तज दो प्रीति हमारी--कर दो संयम की त्यारी॥

(झड़ी)—अब आगया पावस काल, करो मत टाल, भरे सबताल महा जल बरसै। बिन परसे श्रीभगवन्त मेरा जी तरसै। मैं तज दई तीज सलैन, पलट गई पौन, मेरा है कौन मुझे जग तरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना॥

भादों मास (झड़ी)

सखि भादों भरे तलाव, मेरे चितचाव, करूंगी उछाव से सोलहकारण। करूं दसलक्षण के व्रत से पाप निवारण। करूं रोटतीज उपवास, पञ्चमी अकास, अष्टमी खास निशल्य मनाऊं। तपकर सुगन्ध दशमी को कर्म जलाऊं॥

(झर्वटैं)—सखि दुद्धर रस की धारा। तजिहार चार परकारा। करूं उग्र उग्र तप सारा। क्यों होय मेरा निस्तारा।

(झड़ी)—मैं रत्नत्रय व्रत धरूं, चतुर्दशी करूं, जगत् से तिरूं करूं पखवाड़ा। मैं सब से क्षमाउं दोष तजूं सब राड़ा। मैं सातों तत्व विचार, के गाऊं मल्हार, तजा संसार तो फिर क्या करना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—

आसोज मास (झड़ी)

सखि आया मास कुंवार, लो भूषण तार, मुझे गिरनार की दे दो आज्ञा। मेरे पाणिपात्र आहार की है परतिज्ञा। लो तार ये चूड़ामणी, रतन की कणी, सुनों सब जड़ी खोल दो वेनी। मुझको अवश्य भरतारहिं दीक्षा लेनी॥

( झर्वटैं )—मेरे हेतु कमण्डलु लावो। इक पीछी नई मँगावो। मेरा मत जी भरमावो। मम सूते कर्म जगावो॥

(झड़ी)—है जगमें असाता कर्म, बड़ा बेशर्म, मोह के भ्रमसे धर्म न सूझै। इसके वश अपना हित कल्याण न बूझै। जहां मृग तृष्णा की धूर, वहां पानी दूर भटकना भूर कहां जल झरना॥ निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—

कार्त्तिक मास ( झड़ी )

सखि कातिक काल अनन्त, श्रीअरहन्त,की सन्त महन्तने आज्ञा पाली। धर योग यत्न भव भोगकी तृष्णा टाली। सजे चौदह गुण अस्थान, स्वपर पहचान, तजे रु मकान महल दिवाली। लगी उन्हें मिष्ट जिन धर्म अमावस काली॥

( झर्वटैं )—उन केवल ज्ञान उपाया। जगका अन्धेर मिटाया। जिसमें सब विश्व समाया। तन धन सब अथिर बताया॥

( झड़ )—है अथिर जगत् सम्बन्ध, अरो मतिमन्द, जगत्का अन्ध है धुन्ध पसारा। मेरे प्रीतमने सत जानके जगत् विसारा। मैं उनके चरणकी चेरी, तू आज्ञा देरी, सुनले मा मेरी है एक दिन मरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना—

अगहन मास ( झड़ी )

सखि अगहन ऐसी घड़ी, उदै मैं पड़ी, मैं रहगई खड़ी दरस नहिं पाये। मैंने सुकृत के दिन विरथा योंही गँवाये।

नहिं मिले हमारे पिया, न जप तप किया, न संयम लिया अटक रही जगमें। पड़ी काल अनादिसे पापकी बेड़ी पग में॥

(झर्वटैं)—मत भरियो माँग हमारी। मेरे शीलको लागेगारी। मत डारो अञ्जन प्यारी। मैं योगन तुम संसारी॥

( झड़ी )—हुये कन्त हमारे जती, मैं उनकी सती, पलट गई रती तो धर्म नहिं खण्डूं। मैं अपने पिताके वंशको कैसे भंडूं।

नित्य निगोद अनादि रहो अरुके तनकी जहां दुर्लभताई।
ज्यों क्रम सो निकसो वह तें त्यों इतर निगोद रहो चिरछाई॥
सूक्षम बादर नाम भयो जबही यह भाँति धरी पर्यायी। बारहि०॥७॥
औ जब ही पृथ्वी जल तेज भयो पुनि होय वनस्पतिकाई।
देह अघात धरी जब सूक्षम घातत बादर दीरघताई॥
एक उदै प्रत्येक भयो सह धारण एक निगोद बसाई। बारहि०॥८॥
इन्द्रिय एक रही चिरमें कब लब्धि उदै स्वय उपशमनाई।
वे त्रय चार धरो जब इन्द्रिय देह उदै विकलत्रय आई॥
पंचन आदि किधौं पर्यन्त धरे इन इन्द्रियके त्रस काई। बारहि० ॥९
काय धरी पशुकी बहु वार भई जल जन्तुनकी पर्याई।
जो थल मांहि अकाश रहो चिर होय पखेरू पंख लगाई॥
मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके बरणें कहुं पार न पाई। बारहि०॥१०॥
नरक मझार लियो अवतार परो दुख भार न कोई सहाई।
जो तिलसे सुख काज किये अघते सब नरकनमें सुधि आई॥
ता तियके तनकी पुतली हमरे हियरा करि लाल भिराई। बारहि०॥११॥
लाल प्रभा सु महीं जह हैं अरु शर्कर रेत उन्हार बताई।
पङ्क प्रभा जु धुआवत है तमसी सु प्रभा सु महातम ताई॥
जोजन लाख जु पोड़स पिण्ड तहां इकही छिनमें गल जाई॥बारहि०१२॥
जे अघ घात महा दुखदायक मैं विषयारसके फल पाई।
काटत है जबहीं निरदय तबही सरिता महिं देत बहाई॥
देवअदेव कुमार जहाँ बिच पूरव वैर बताबत जाई॥ बारहि० ॥१३॥
ज्यों नरदेह मिली क्रम सों करि गर्भ कुवास महादुखदाई।
जे नव मास कलेश सहे मलमूत्र अहार महाजय ताई॥
जे दुख देखि जबैंनिकसो पुनि रोवत बालपनेदुखदाई। बारहि०॥१४॥
यौवन में तन रोग भयो कबहूं विरहा-नल व्याकुलताई।
मान विषैं रस भोग चहों उन्मत्त भयो सुख मानत ताही।

आय गयो क्षणमें विरधापन सेा नर भौ इस भाँति गमाई ॥बारहिं०॥
देव भयो सुर लोक विषें तब मोहि रहो परया उर लाई।
पाय विभूति बढ़े सुरकी पर सम्पति देखत झूरत छाई॥
माल जबें मुरझाय रहो थित पूरण जानि तबें बिल-लाई ॥बारहिं०१६॥
जे दुख मैं भुगते भवके तिनके वरणें कहुं पार न पाई।
काल अनादिन आदि भयो तहँ मैं दुख भाजन हेा अध माहीं॥
सेा दुख जानत हो तुमहीं जबहीं यह भांति धरोपर्यायी ॥बारहिं०१७॥
कर्म अकाज करे हमरे हमको चिरकाल भये दुखदाई।
मैं न बिगाड़ करो इनको बिन कारण पाय भये अरि आई।
मात पिता तुमहीं जगके तुम छांड़ि फिरादि करों कह जाई ॥बारहिं०
सेा तुम सों सब दुःख कहो प्रभु जानत हो तुम पीर पराई।
मैं इनको सत्संग कियेा दिनहूँ दिन आवत मोहिं बुराई॥
ज्ञान महानिधि लूट लियो इन रङ्क कियेा यह भांति हराई ॥बारहिं०
मैं प्रभु एक सरूप सहो सब ये इन दुष्टन को कुटलाई।
पाप सु पुण्य दुहूं निज मारग में हमसो नहिं फांसि लड़ाई॥
मोहि थकाय दियेा जगसे विरहानल देह दहै न बुझाई ॥बारहिं०॥२०॥
*ये विनती सुन सेवक की निज मारग में प्रभु लेव लगाई॥*
मैं तुम दास रहो तुमरे संग लाज करो शरणागति आई॥
मैं कर दास उदास भयो तुमरी गुणमाल सदा उर लाई ॥बारहिं०॥२१॥
देर करो मत श्री करुणानिधि जू गति राखनहार निकाई।
योग जुरे क्रमसेा प्रभुजी यह न्याय हजूर भयेा तुम आई॥
आन रहो शरणागति हौं तुम्हरी सुनिवे तिहुं लेाक बड़ाई ॥बारहिं०२२॥
मैं प्रभु जी तुम्हरी समको इन अन्तर पाय करो दुसराई।
न्याय न अन्त कटे हमरो न मिले हमको तुम सी ठकुराई॥
सन्तन राख करो अपने ढिग दुष्टनि देहु निकास बहाई। बारहिं०॥२३॥
दुष्टन की सत्संगति में हमको कछू जान परी न निकाई।

सेवक साहब की दुविधा न रहे प्रभु जी करिये सु भलाई ॥
फेर नमों सु करों अरजी जसु जाहर जानि परे जगताई ॥बारहिं०॥२४॥
ये विनती प्रभु के शरणागति जे नर चित्त लगाय करेंगे।
जे जगमें अपराध करे अघ ते क्षणमात्र भरे में हरेंगे।
जे गति नीच निवास सदा अवतार सुधो स्वरलोकधरेंगे।
देवीदासकहें क्रम सों पुनि ते भवसागर पार तरेंगे ॥२५॥

---

# शीलमहात्म्य।

जिनराज देव कीजिये मुझ दीन पर करुना। भवि वृन्दको अब दीजिये बस शीलका शरना ॥ टेक ॥ शीलकी धारा में जो स्नान करें हैं। मल कर्मको सो धोय के शिवनार वरें हैं ॥ व्रतराज सो वेताल व्याल काल डरें हैं। उपसर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरें हैं॥१॥ तप दान ध्यान जाप जपन जोग अचारा। इस शील से सब धर्मके मुंह का है उजारा ॥ शिवपन्थ ग्रन्थ मंथ के निर्ग्रन्थ निकारा। विन शील कौन कर सके संसार से पारा ॥२॥ इस शीलसे निर्वाण नगरकी है अवादी। त्रेसठ शलाका कौन ये ही शील सवादी ॥ सब पूज्य की पदवी में है परधान ये गादी। अठारा सहस्र भेद भने वेद अवादी ॥३॥ इस सील से सीता को हुआ आब से पानी। पुर द्वार खुला चलनिमें भर कूप सों पानी ॥ नृप ताप टरा शील से रानी दिया पानी। गङ्गामें ग्राह सों बची इस शीलसे रानी ॥ ४ ॥ इस शील हीसे साँप सुमन माल हुआ है। दुख अंजना का शील से उद्धार हुआ है ॥ यह सिन्धुमें श्रीपालको आधार हुआ है। वप्राका परम शील हीसे यार हुआ है ॥५॥ द्रौपदी का हुआ शीलसे अम्बर का अमारा। जा धातु द्वीप कृष्ण ने सब कष्ट निवारा ॥ सब चन्दना सती की व्यथा शीलने टारा।

दारा, परिवार, किसी का न कोई साथी सब हैं अकेले ही ॥ गिरिधर छोड़कर दुविधा न सोचकर, तत्त्व छान बैठके एकान्त में अकेले ही। कल्पना है नाम रूप झूठे राव रंक भूप, अद्वितीय चिदानन्द तू तो है अकेले ही ॥ ४ ॥

## अन्यत्व भावना।

घर बार धन धान्य दौलत खजाने माल, भूषण वसन बड़े बड़े ठाठ न्यारे हैं। न्यारे न्यारे अवयव शिर धड़ पाँव न्यारे, जीभ त्वचा आँख नाक कान आदि न्यारे हैं ॥ मन न्यारा चित न्यारा चित्त के विकार न्यारे, न्यारा है अहंकार सकल कर्म न्यारे हैं। गिरिधर शुद्ध बुद्ध तूतो एक चेतन है, जग में है और जो जो तोसे सारे न्यारे हैं ॥ ५ ॥

## अशुचि भावना।

गिरिधर मल मल साबू खूब न्हाये धोये, कीमती लगाय तेल बार बार बाल में। केवड़ा गुलाब बेला मोतियाँ के सूंघे इत्र, खाये खूब माल ताल पड़े खोटी चाल में। पहने बसन नीके निरख निरख काँच, गर्व कर देह का न सोचा किसी काल में। देह अपवित्र महा हाड़ मांस रक्त भरा, थैला मलमूत्र का बँधा है नसजाल में ॥ ६ ॥

## आश्रव भावना।

मोह की प्रबलता से कषायों की तीव्रता से, विषयों में प्राणी मात्र देखो फँस जाते हैं। यहां फँसे वहां फँसे यहां पिटे वहां कुटे, इसे मारा उसे ठोका पाप यों कमाते हैं ॥ पड़ते परन्तु जैसे जैसे हैं कषाय मन्द, वैसे वैसे उत्तम प्रकृति रच पाते हैं। गिरिधर बुरे भले मन बच काय योग, जैसे रहें सदा वैसे कर्म बन आते हैं ॥ ७ ॥

## संवर भावना।

तोड़ डाल भ्रम जाल, मोह से विरत हो जा, कर न प्रमाद कभी छोड़ दे कषाय तू। दूर हो विचार बात करने से विषयों की, माथे पड़ी सारी सह मत उकताय तू॥ मन रोक वाणी रोक रोक सब इन्द्रियों को, गिरिधर सत्य मानकर ये उपाय तू। बधेंगे न कर्म नये निरपेक्ष होके सदा, कर्तव्य पालन कर खूब ज्यों सुहाय तू॥ ८॥

## निर्जरा भावना।

इससे न बात करो इसे यहां न आने दो, इस को सताओ मारो क्योंकि दोषवान है। कपटी कलंकी क्रूर पापी अपराधी नीच, चोर डाकू; गंठकटा कुकर्मों की खान है। रखके विचार ऐसे लोग जो सतावें तोभी, सहले विपत्तियों को माने ऋण-दान है। गिरिधर धर्म पाले किसी से न बांधे बैर, तपसे नसावे कर्म वही ज्ञानवान है॥ ९॥

## लोक भावना।

बांकी कर कोन्हियों को जरा पांव दूरे रख, आदमी को खड़ाकर गिरिधर ध्यान धर। चतुर्दश राजू लोक ऐसा ही है नराकार, उसमें भरे हैं द्रव्य छहों सभी स्थान पर॥ एकेन्द्रिय द्वीन्द्रिय त्रिन्द्रिय चतुरिन्द्रिय त्यों, पञ्चेन्द्रिय संज्ञ्य-संज्ञी पर्याप्तापर्याप्त कर। भरे ही पड़े हैं जीव पर सब चेतन हैं स्वानुभव करें त्यों त्यों पावें मोक्ष धाम वर॥ १०॥

## बोधिदुर्लभ भावना।

एक एक श्वास में अठारह अठारह बार, मर मर धरें देह जगजीव जानलो। बड़ी ही कठिनता से निकले निगोदसे तो, अगणित बार भ्रमे भव भव मानलो॥ दुर्लभ मनुष्य भव

सर्वोत्तम कुलधर्म, पाये हो गिरिधर तो सत्य तत्व छानलो। होकर प्रमाद वश काल क्षेप करो मत, सबकी भलाई करो निजको पिछानलो ॥ ११ ॥

## धर्म भावना।

बाहरी दिखावटों को रहने न देता कहीं, सारे दोष दूर कर सुख उपजाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, माया, मिथ्या, तृष्णा, मद, मान, मल सबको नसाता है ॥ तन मन वाणी को बनाता है विशुद्ध और, पतित न होने देता ज्ञान प्रकटाता है। गिरिधर धर्म प्रेम एक सत्य जगवीच, परमात्मतत्व में जो सहज मिलाता है ॥ १२ ॥

## सामायिक।

हो सत्त्वपै सखिपना, मुद हो गुणी पै। माध्यस्थ भाव मम होय विरोधियोंपै ॥ दुःखार्तपै अयि दयाधन हो दया ही। हों नाथ कोमल सदा परिणाम मेरे ॥ १ ॥

धारूं क्षमा सुमृदुता ऋजुता सदा मैं। त्यों सत्य, शौच, प्रिय संयम भी न त्यागूं ॥ छोडूं नहीं तप, अकिंचन, ब्रह्मचर्य, है रत्नराशि दशलक्षण धर्म मेरा ॥ २ ॥

मैं देवपूजन करूं, गुरुभक्तिसाधूं। स्वाध्याय में रच सुसंयम आदरूं मैं ॥ धारूं प्रभो तप, निरंतर दान दूं मैं। षट्कर्म ये नितकरूं जबलौं गृही हूं ॥ ३ ॥

पाऊं महासुख प्रभो, दुख वा उठाऊं। सोऊं पलंग पर, भूपर ही पड़ूं वा ॥ सोहे तथापि समता अति उच्च मेरी। सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ ४ ॥

चाहे रहूं भवनमें, वनमें रहूं, या-प्रासाद में बस रहूं अथवा कुटीमें ॥ सोहे तथापि समता अतिउच्च मेरी-सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ ५ ॥

डरें क्या अस्त्रशस्त्रों से, छुवे क्या अस्त्रशस्त्रों को।
हमारा राष्ट्रही जब है, स्वयंसेवक अहिंसा का ॥ ३ ॥
बिना जीते महारणके, न जीते-जी टलेंगे हम।
तजेंगे त्यों न तिलभर को, कभी रस्ता अहिंसा का ॥ ४ ॥
भलें पालेसियां चल चल, हमें कोई भुलावे दें।
भुलावों में न आवेंगे, दिखा विक्रम अहिंसा का ॥ ५ ॥
न हम नापाक खूनों से, रंगेंगे पाक हाथों को।
हमारा खून होता हो, विजय होगा अहिंसा का ॥ ६ ॥
कभी धीरज न छोड़ेंगे, जहां में शांति भर देंगे।
सिखावेंगे सबक सब को, अहिंसा का अहिंसा का ॥ ७ ॥
हमारे दुश्मने जानी भी, होंगे दोस्त कल आके।
कहेंगे सर झुकाके यों, बतादो गुर अहिंसाका ॥ ८ ॥
तमन्ना है, न दुनियां में, निशां भी हो गुलामी का।
सभी आजाद हों कोमें, बजे डंका अहिंसा का ॥ ९ ॥

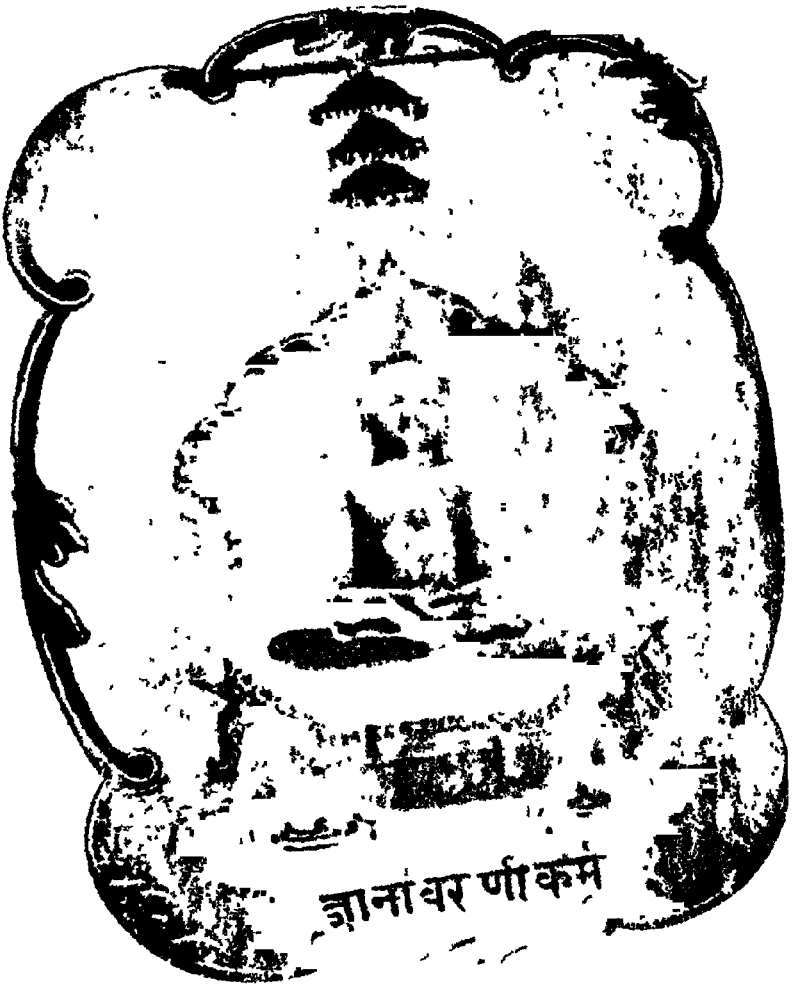
ज्ञानावरणीकर्म

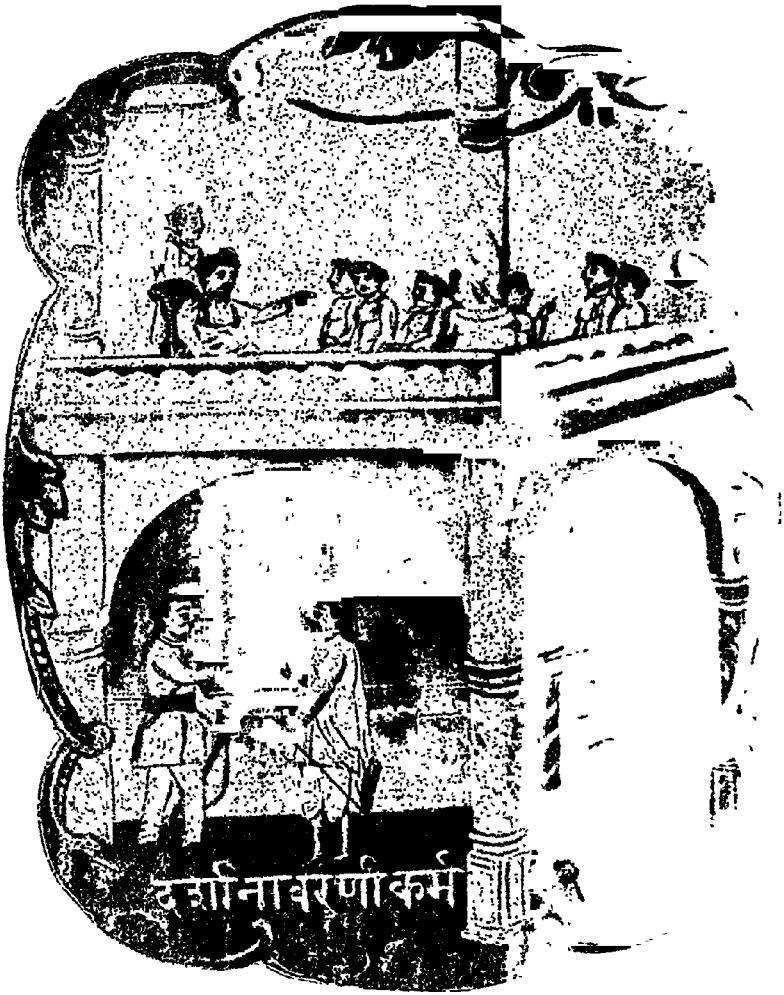
दर्शनावरणीकर्म

नोट—कुलकरों में नाभिराजा, दान देने में श्रेयांस राजा, तप करने में बाहुबली जो एक साल तक कायोत्सर्ग खड़े रहे। भाव की शुद्धता में भरत, चक्रवर्ती को दीक्षा लेते ही केवल ज्ञान हुआ। बलदेवों में रामचन्द्र, कामदेवों में हनुमान, सतियों में सीता, मानियों में रावण, नारायणों में कृष्ण, रुद्रों में महादेव, बलवानों में भीम, तीर्थंकरों में पार्श्वनाथ, ये पुरुष जगत् में बहुत प्रसिद्ध हुए हैं।

## दूसरे सिद्धक्षेत्रों के नाम।

१ मांगीतुंगी, २ मुक्तागिरि (मेढ़गिरि), ३ सिद्धवरकूट, ४ पावागिरि (चेलना नदी के पास), ५ शत्रुञ्जय, ६ बड़वानी, ७ सोनागिरि, ८ नैनागिरि (नैनानन्द), ९ दौनागिरि, १० तारंगा, ११ कुन्थुगिरि, १२ गजपंथ, १३ राजग्रही, १४ गुणावा, १५ पटना, १६ कोटिशिला।

## चौदह गुणस्थान।

१ मिथ्यात्व, २ सासादन, ३ मिश्र, ४ अविरत सम्यक्त्व, ५ देशव्रत, ६ प्रमत्तविरत, ७ अप्रमत्तविरत, ८ अपूर्व करण, ९ अनिवृत्तिकरण, १० सूक्ष्म सांपराय, ११ उपशान्त कषाय वा उपशान्त मोह, १२ क्षीण कषाय वा क्षीण मोह, १३ सयोगकेवली, १४ अयोगकेवली।

## श्रावक के २१ उत्तर गुण।

१ लज्जावन्त, २ दयावन्त, ३ प्रसन्नता, ४ प्रतीतिवन्त, ५ परदोषाच्छादन, ६ परोपकारी, ७ सौम्य दृष्टि, ८ गुणग्राही,

९ श्रेष्ठ पत्नी १० मिष्टवादी, ११ दीर्घविचारी, १२ दानवन्त, १३ शीलवन्त, १४ कृतज्ञ, १५ तत्वज्ञ, १६ धर्मज्ञ, १७ मिथ्यात्व-रहित, १८ सन्तोषवन्त, १९ स्याद्वादभाषी, २० अभक्ष-त्यागी, २१ षट्कर्म-प्रवीण।

## श्रावक की ५३ क्रियायें।

८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, १ समताभाव, ११ प्रतिमा, ४ दान, ३ रत्नत्रय, १ जल-छानन-क्रिया, १ रात्रि-भोजन-त्याग और दिन में अन्नादिक भोजन सोधकर खाना अर्थात् छानबीन कर देख-भाल कर खाना।

श्रावक के ८ मूलगुण—५ उदम्बर। ३ मकार।

१२ व्रत—५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत।

५ अणुव्रत—१ अहिंसाअणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ परस्त्री त्याग अणुव्रत, ४ अचौर्य (चोरी-त्याग अणुव्रत), ५ परिग्रह-प्रमाण अणुव्रत।

३ गुण व्रत—१ दिग व्रत, २ देशव्रत, ३ अनर्थ दंड-त्याग

४ शिक्षाव्रत—१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ अतिथि-संविभाग, ४ भोगोपभोग परिमाण।

१२ तप— आचार्य के ३६ गुणों में लिखे हैं। इनके भी वही नाम हैं। ज्यादे इतना है कि मुनियों के महान् व्रत होते हैं। श्रावकों के अणुव्रत अर्थात् कम परीषहवाले।

११ प्रतिमा—१ दर्शनप्रतिमा, २ व्रत, ३ सामायिक, ४ प्रोषधोपवास, ५ सचित्तत्याग, ६ रात्रिभुक्ति-त्याग, ७ ब्रह्म-

चर्य, ८ आरम्भ-त्याग, ९ परिग्रह-त्याग, १० अनुमति-त्याग, ११ उद्दिष्ट-त्याग।

४ दान—आहारदान, औषधदान, शास्त्रदान और अभय-दान। यह ४ दान श्रावक को करने योग्य हैं।

३ रत्नत्रय—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र।

यह तीन रत्न श्रावक के धारने योग्य हैं। इनका खुलासा अर्थ जैन-बाल-गुटके के दूसरे भाग में सम्यक्त के वर्णन में लिखा है। इनका नाम रत्न इस कारण से है कि जैसे सुवर्णादिक सर्व धन में रत्न उत्तम अर्थात् बेश कीमत होता है। इसी प्रकार कुल नियम, व्रत, तप में यह तीन सर्व में उत्तम हैं। जैसे कि बिना अंक बिन्दियाँ किसी काम की नहीं इसी प्रकार बगैर इन तीनों के सारे व्रत नियम कुछ भी फलदायक नहीं हैं। सर्व नियम, व्रत मानिन्द बिन्दी (शून्य) के हैं। यह तीनों मानिन्द शुरू के अङ्क के हैं। इसलिये इन तीनों को रत्न माना है।

दातार के २१ गुण—९ नवधाभक्ति, ७ गुण और ५ आभूषण।

यह २१ गुण दातार के हैं। अर्थात् पात्र को दान देनेवाले दातामें यह २१ गुण होने चाहिए।

दातार की नवधाभक्ति—पात्र को देख बुलाना, उच्चासन पर बैठाना, चरण धोना, चरणोदक मस्तक पर चढ़ाना, पूजा करना, मन शुद्ध रखना, वचन विनय-रूप बोलना, शरीर शुद्ध रखना और शुद्ध आहार देना।

यह नव प्रकार की भक्ति दातार है। अर्थात् दातार कहिए दान देनेवाले को यह नव प्रकार की नवधाभक्ति करनी चाहिए।

दातार के सातगुण—१ श्रद्धावान् होना, २ शक्तिवान होना, ३ अलोभी होना, ४ दयावान् होना, ५ भक्तिवान् होना, ६ क्षमावान् होना और ७ विवेक वान् होना।

दातार में यह सात गुण होते हैं। अर्थात् जिसमें यह सात गुण हों वह सच्चा दातार है।

दातार के पांच भूषण—१ आनन्दपूर्वक देना, २ आदर-पूर्वक देना, ३ प्रिय वचन कहकर देना, ४ निर्मल भाव रखना, ५ जन्म सफल मानना।

दाता के पाँच दूषण—१ विलम्ब से देना, २ विमुख होकर देना, ३ दुर्वचन कहके देना, ४ निरादर करके देना, ५ देकर पछताना।

यह दाता के पाँच दूषण हैं। अर्थात् दातार में यह पांच बातें नहीं होनी चाहिए।

## ग्यारह प्रतिमाओं का सामान्य स्वरूप।

दोहा।

प्रणम पंच परमेष्ठि पद, जिन आगम अनुसार।
श्रावक-प्रतिमा एकदश कहुँ भविजन हितकार॥ १॥

सवैया-श्रद्धा कर व्रत पाले, सामायकि दोष टाले, पौसौ माँड सचित कौं त्यागै, लौं घटायकैं। रात्रिभुक्ति परिहरै,

मैं अनादि जग-जाल माँहि फँसि रूप न जाण्यो ।
एकेंद्रिय दे आदि जंतु को प्राण हराण्यो ॥
ते अब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी ।
भव भव को अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी ॥१५॥

## अथ चतुर्थ स्तवन कर्म ।

नमूं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्म कों ।
संभव भव दुःखहरणकरण अभिनन्द शर्म कों ॥
सुमति सुमतिदातार तार भवसिन्धु पारकर ।
पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥१६॥
श्रीसुपार्श्व कृतपास नाश भव जास शुद्ध कर ।
श्रीचंद्रप्रभ चंद्रकांति सम देह कांति धर ॥
पुष्पदंत दमि दोषकोश भवि पोष रोषहर ।
शीतल शीतल करन हरन भव ताप दोषहर ॥१७॥
श्रेयरूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्यजन ।
वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक भव भय हन ॥
विमल विमल मति देन अन्त गत हैं अनन्त जिन ।
धर्म शर्म शिवकरन शांति जिन शांति विधायिन ॥१८॥
कुन्थु कुन्थु मुखजीवपाल अरनाथ जाल हर ।
मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारण प्रचार धर ॥
मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुर संघहि नमि जिन ।
नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ मांहि ज्ञान धन ॥ १९ ॥
पार्श्वनाथ जिन पार्श्वउपलसम मोक्षरमापति ।
वर्द्धमान जिन नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत ॥
या विधि मैं जिन संघरूप चउबीस संख्यधर ।
स्तऊं नमूं हूं बार बार वंदौं शिव सुखकर ॥ २० ॥

## अथ पंचम वंदना कर्म।

वंदूं मैं जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति।
वर्द्धमान अतिवीर वंदिहौं मनवचतनकृत॥
त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति वंदूं।
वन्दू नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकंदूं॥ २१॥
सिद्धारथ नृपनंद द्वन्द दुख-दोष मिटावन।
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन॥
कुंडलपुर करि जन्म जगतजित आनँदकारन।
वर्ष बहत्तरि आयु पाय सब ही दुख टारन॥ २२॥
सप्त हस्त तनु तुंग भंग कृत जन्म मरण भय।
बालब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय॥
दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन।
आप बसे शिवमाहिं ताहि वंदौं मनवचतन॥ २३॥
जाके वंदन थकी दोष दुख दूरहि जावै।
जाके बंदन थकी मुक्ति तिय सन्मुख आवै॥
जाके वदन थकी वंद्य होवैं सुरगन के।
ऐसे वीर जिनेश बंदिहूं क्रमयुग तिनके॥ २४॥
सामायिक षट् कर्म माहिं वंदन यह पंचम।
वंदे वीर जिनेंद्र इंद्रशतवंद्य वंद्य मम॥
जन्म-मरण भय हरो करो अघ शांति शांतिमय।
मैं अघकोश सुपोष दोष को दोष विनाशय॥ २५॥

## अथ षष्ठम कायोत्सर्ग कर्म।

कायोत्सर्ग विधान करूं अंतिम सुखदाई।
कायत्यजन मय होय काय सबको दुखदाई॥

पूरब दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं।
जिन-गृह वंदन करूं हरूं भव पाप-तिमिर मैं॥ २६॥
शिरोनती मैं करूं नमूं मस्तक कर धरि कैं।
आवर्त्तादिक क्रिया करूं मन वच मद हरि कैं॥
तीन लोक जिन भवन माहिं जिन हैं जु अकृत्रिम।
कृत्रिम हैं द्वयअर्द्धद्वीपमाहीं वंदौं जिम॥ २७॥
आठकोडिपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणु।
चारि शतकपरि असी एक जिनमंदिर जाणूं॥
व्यंतर ज्योतिषमाहिं संख्यरहिते जिनमंदिर।
जिन-गृह वंदन करूं हरहु मम पाप संघकर॥ २८॥
सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक।
सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्रीदायक॥
श्रावक अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक।
यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक॥२९॥
जे भवि आतम काज करण उद्यम के धारी।
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी॥
राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब।
बुध महाचंद्र विलाय जाय तातैं कीयो अब॥३०॥

इति सामायिक भाषा पाठ समाप्त।

# श्रीअमितगति आचार्य विरचित
# (सामायिक पाठ संस्कृत)।

सत्त्वेषु मैत्रो गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव॥१॥

शरीरतः कर्त्तुमनन्तशक्तिं, विभिन्नमात्मानमपास्तदोषम् ।
जिनेन्द्र कोषादिव खङ्गयष्टिं, तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥२॥
दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे, योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेषममत्वबुद्धेः, समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥३॥
मुनीश लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निशाताविव बिम्बिताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ॥४॥
एकेन्द्रियाद्या यदि देव देहिनः, प्रमादतः संचरता इतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मलिता निपीडिता, तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥५॥
विमुक्तमार्गप्रतिकूलवर्त्तिना, मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया ।
चारित्रशुद्धेर्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥६॥
विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं, मनोवचःकायकषायनिर्मितम् ।
निहन्मि पापं भवदुःखकारणं भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम् ॥७॥
अतिक्रमं यं विमतेर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं सुचरित्रकर्म्मणः ।
व्यधादनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥८॥
क्षतिं मनःशुद्धिविधेरतिक्रमं, व्यतिक्रमं शीलव्रतेर्विलंघनम् ।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्त्तनं, वदन्त्यनाचारमिहातिशक्तिताम् ॥९॥
यदर्थमात्रापदवाक्यहीनं, मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवलबोधलब्धिः ॥१०॥
बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देवि ॥११॥
यः स्मर्य्यते सर्व्वमुनीन्द्रवृन्दैः, यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।
यो गीयते वेद पुराणशास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१२॥
यो दर्शनज्ञानसुखस्वभावः, समस्तसंसारविकारबाह्य ।
समाधिगम्यः परमात्मसंज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१३॥

त्रिभुवन पति हो ताहि तैं छत्र विराजे तीन।
अमरा नाग नरेश पद रहे चरण आधीन ॥ १५ ॥
सब निरखत भव आपने तुव भामंडल बीच।
भ्रम मेटे समता गहे नाहिं लहै गति नीच ॥ १६ ॥
दोई ओर ढोरत अमर चौसठ चमर सफेद।
निरखत ही भव को हरे भव अनेक को खेद ॥ १७ ॥
तरु अशोक तुव हरत है भवि जीवन का शोक।
आकुलता कुल मेटि के करै निराकुल लोक ॥ १८ ॥
अंतर बाहिर परिग्रह त्यागी सकल समाज।
सिंहासन पर रहत हैं अंतरीक्ष जिनराज ॥ १९ ॥
जीत भई रिपु मोह तैं यश सूचत है तास।
देव दुंदुभि के सदा बाजे बजैं अकास ॥ २० ॥
बिन अक्षर इच्छा रहित रुचिर दिव्य ध्वनि होय।
सुर नर पशु समझें सबै संशय रहे न कोय ॥ २१ ॥
बरसत सुर तरु के कुसुम गुंजत अलि चहुं ओर।
फैलत सुयश सुवासना हरषत भवि सब ठौर ॥ २२ ॥
समुंद बाघ अरु रोग अहि अर्गल बंध संग्राम।
विघ्न विषम सबही टरै सुमरत ही जिन नाम ॥ २३ ॥
श्रीपाल चंडाल पुनि अंजन भील कुमार।
हाथी हरि अहि सब तरे आज हमारी बार ॥ २४ ॥
बुध जन यह विनती करै हाथ जोड़ शिर नाय।
जब लों शिव नहिं होइ तुव भक्ति हृदय अधिकाय ॥२५॥

# शान्तिनाथाष्टक-स्तोत्र।

नाना विचित्रंभव दुःख रासी, नाना विचित्रं मोहान् पांशी।
पापानि दोषानिहरंति देवा, इह जन्म शरणे श्री शान्ति-
नाथं ॥ १ ॥ संसार मध्ये मिथ्यात्व चिंता, मिथ्यात्व मध्ये
कर्माणि बद्धा। ते बन्ध छेदन्ति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे
श्रीशान्तिनाथं ॥ २ ॥ कामस्य क्रोधस्य माया त्रिलोभं, चतुः
कषाय इह जन्म बन्धम्। ते बन्ध छेदन्ति देवाधि देवा, इह जन्म
शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ३ ॥ जातस्य मरणं अवृतस्य वचनं
वसंति जीवा बहु दुःख जन्म। ते बंध छेद्न्ति देवाधि देवा,
इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ४ ॥ चारित्र हीने नर
जन्म मध्ये; सम्यक्त रत्नं प्रतिपाल यंति। ते जीव सीदन्ति
देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ५ ॥ मृदु
वाक्यहीने कठिनस्य चिन्ता, परजीव हिंसा मनसोच बंधा।
ते बंध छेदंति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं॥६॥
परद्रव्य चोरी परदार सेवा, हिंसादि कक्षा अनुबन्ध वेधं।
ते बंध छेदंति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ७
पुत्रानि मित्रानि कलत्र बंधं, इह बंध मध्ये बहु जीव बंधं।
ते बंध छेदंति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथम् ॥८

जपति पढ़ति नित्यं शान्तिनाथा विशुद्धं
स्तवन मधु गिरायां, पापतापं हरं
शिव सुख निधि पोतं, सर्व सत्वानुकंपं।
कृत मुनि गुणभद्रं, सर्व कार्या सुनित्यं ॥

इति शान्तिनाथ स्तोत्र

# महावीराष्टक स्तोत्र।

कविवर भागचन्दजी कृत।

शिखरनी छन्द।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः।
समं भान्ति ध्रौव्यं व्यय जनिलसन्तोऽन्तरहिताः
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिवयो
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥
अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितम्
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि
स्फुटं मूर्त्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥२॥
नमन्नाकेन्द्राली मुकुट मणिभाजाल जटिल
लसत्पादाम्भोज द्वयमिह यदीयं तनुभृतां
भवज्वालाशान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥३॥
यदर्च्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः
लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा ?
महावीर स्वामी नयनपथ गामी भवतु मे (नः) ॥४॥
कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो
विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिर
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥५॥
यदीया वाग्गङ्गा विविधनयकल्लोलविमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति

न याको, विरचन योग्य सही है। यह तन पाय महा तप कीजे, इस में सार यही है ॥ ९ ॥ भोग बुरे भव रोग बढ़ावैं, वैरी हैं जग जीके। वे रस होय विपाक समय अति, सेवत लागैं नीके ॥ वज्र अग्नि विषधर से हैं वे, हैं अधिके दुःखदाई। धर्मरत्न को चोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहाई ॥ १० ॥ मोह उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जाने। ज्यों कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन माने ॥ ज्यों ज्यों भोग संयोग मनोहर, मन वांछित जन पावे। तृष्णा नागिन त्यों त्यों झंके लहर लोभ विष लावे ॥ ११ ॥ मैं चक्री पद पाय निरन्तर, भोगे भोग घनेरे। तोभी तनक भये ना पूरण, भोग मनोरथ मेरे ॥ राज समाज महा अघ कारण, वैर बढ़ावन हारा। वेश्या सम लक्ष्मी अति चचल इसका कौन पत्यारा ॥ १२ मोह महा रिपु बैर विचारे, जग जीव संकट डारे। घर कारागृह वनिता बेड़ी, परजन हैं रखवारे ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप, ये जिय को हितकारी। ये ही सार असार और सब, यह चक्री जीय धारी ॥ १३ ॥ छोड़े चौदहरत्न नवोनिधि, और छोड़े संग साथी। कोटि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बहुतेरी, जीर्ण तृणावत् त्यागी। नीति विचार नियोगी सुत को, राज्य दिया बड़ भागी ॥ १४ ॥ होय निस्सल्य अनेक नृपति संग, भूषण वसन उतारे। श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा, पंच महा व्रत धारे ॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धन्य वीर्य गुण धारी। ऐसी सम्पति छोड़ बसे वन, तिन पद धोक हमारी ॥ १५ ॥

परिग्रह पोठ उतार सब, लीनो चारित्र पंथ।
निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निर्ग्रंथ ॥

# समाधिमरण भाषा

( पं० सूरचन्दजी रचित )

वन्दों श्रीवर्हन्त परम गुरु, जो सबको सुखदाई।
इसजगमें दुख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई।
अब मैं अरज करूं नित तुमसे, कर समाधि उरमाँहीं।
अन्तसमयमें यह वर माँगूं, सो दीजे जगराई ॥ १ ॥
भव भवमें तन धार नये मैं, भव भव शुभ सँग पायो।
भव भवमें नृप ऋद्धि लई मैं, मात पिता सुत थायो ॥
भव भवमें तन पुरुष तनो धर, नारीहूं तन लीनो।
भव भवमें मैं भयो नपुंसक, आतमगुण नहिं चीनो ॥२॥
भव भवमें सुरपदवी पाई, ताके सुख अति भोगे।
भव भवमें गति नरकतनी धर, दुख पायो विधयोगे ॥
भव भवमें तिर्यञ्च योनि धर, पायो दुख अति भारी।
भव भवमें साधर्मी जनको, संग मिलो हितकारी ॥ ३ ॥
भव भवमें जिनपूजन कीनी, दान सुपात्रहि दीनो।
भव भवमें मैं समवसरणमें, देखो जिनगुण भीनो ॥
एती वस्तु मिली भव भवमें, सम्यक् गुण नहिं पायो।
ना समाधियुत मरण करा मैं, ताते जग भरमायो॥ ४ ॥
काल अनादि भयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहिं कीनो।
एक वारहू सम्यकयुत मैं, निज आतम नहिं चीनो ॥
जो निजपरको ज्ञान होय तो, मरण समय दुखदाई।
देह विनाशी मैं निजभाशो, जोति स्वरूप सदाई ॥ ५ ॥
विषय कषायनमें वश होकर, देह आपनो जानो।
कर मिथ्याश्रद्धान हिये विच, आतम नाहिं पिछानो ॥

यों कलेश हिय धार मरणकर, चारों गति भरमायो।
सम्यकदर्शन ज्ञान तीन ये, हिरदेमें नहिं लायो ॥ ६॥
अब या अरज करूं प्रभु सुनिये, मरणसमय यह मागो।
रोग जनित पीड़ा मत होऊं, अरु कषाय मत जागो ॥
ये मुझ मरणसमय दुखदाता, इन हर साता कीजे।
जो समाधियुत मरणहोय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजे॥७॥
यह तन सात कुधात मई है, देखत ही घिन आवे।
चर्म लपेटी ऊपर सोहै, भीतर विष्टा पावे ॥
अति दुर्गंध अपावन सो यह, मूरख प्रीति बढ़ावे।
देह विनाशी यह अविनाशी, नित्यस्वरूप कहावे ॥८॥
यह तन जीर्ण कुटीसम मेरो, यातें प्रीति न कीजे।
नूतन महल मिले फिर हमको, यामें क्या मुझ छीजे ॥
मृत्यु होनसे हानि कौन है, याको भय मत लावो।
समता से जो देह तजोगे, तो शुभ तन तुम पावो ॥९॥
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो. इस अवसर के माहीं।
जीरण तनसे देत नयो यह, या सम साऊ नाहीं ॥
या सेती तुम मृत्युसमय नर, उत्सव अतिही कीजै।
क्लेशभावको त्याग सयाने, समताभाव धरीजै ॥ १० ॥
जो तुम पूरव पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई।
मृत्युमित्र बिन कौन दिखावै, स्वर्ग सम्पदा भाई ॥
राग द्वेषको छोड़ सयाने, सात व्यसन दुखदाई।
अन्त समय में समता धारो, पर भव पन्थ सहाई ॥११॥
कर्म महा दुठ वैरी मेरो तासेती दुख पावे।
तन पिंजरे में बंध कियो मुझ, जासों कौन छुड़ावे ॥
भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तनमें गाढ़े।
मृत्युराज अब आप दयाकर तन पिंजर से काढ़े ॥१२॥

होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे॥ ६
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे।
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे।
तो भी न्यायमार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावे॥ ७॥
होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे।
पर्वत-नदी-श्मशान-भयानक अटवी से नहिं भय खावे।
रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन, दृढ़तर बन जावे।
इष्टवियोग-अनिष्टयोग में सहनशीलता दिखलावे॥ ८॥
सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
वैरि-पाप-अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे।
घर घर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावें।
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज जन्म-फल सब पावें॥९॥
ईति-भीति व्यापे नहिं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करे।
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा-धर्म जगत में, फैल सर्वहित किया करे॥ १०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नहिं कोई मुख से कहा करे।
बनकर सब 'युग-वीर' हृदय से देशोन्नति रत रहा करें।
वस्तु-स्वरूप विचार खुशी से सब दुख-संकट सहा करें॥११॥

# इष्ट छत्तीसी।

## अर्थात्

# पंच परमेष्ठी के १४३ मूल गुण।

## सोरठा।

प्रणमूं श्रीअरहंत, दयाकथित जिनधर्मको।
गुरु निरग्रंथ महन्त, अवर न मानूं सर्वथा ॥ १ ॥
विन गुण की पहिचान, जानें वस्तु समानता।
तातैं परम वखान, परमेष्ठी के गुण कहूं ॥ २ ॥
रागद्वेषयुत देव—मानै हिंसाधर्म पुनि।
सग्रंथगुरु की सेव, सेा मिथ्याती जग भूमै ॥ ३ ॥

## अरहंत के ४६ मूल गुण।

### दोहा।

चौंतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ।
अनन्त चतुष्टय गुणसहित, छीयालीसों पाठ ॥ ४ ॥

अर्थ—३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, ४ अनन्त चतुष्टय ये अरहंत के ४६ मूल गुण होते हैं। अब इनका भिन्न भिन्न वर्णन करते हैं—

### जन्म के १० अतिशय।

अतिशय रूप सुगंध तन, नाहिं पसेव निहार।
प्रियहित वचन अतुल्य बल, रुधर श्वेत आकार ॥

लच्छण सहसरु आठ तन, समचतुष्कसंठान।
वज्रवृषभनाराच जुत, ये अतशय दश जान॥ ६॥

अर्थ—१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, ३ पसेवरहित शरीर, ४ मलमूत्ररहित शरीर, ५ हित-मितप्रियवचन बोलना, ६ अतुल्यबल, ७ दुग्धवत् श्वेत रुधिर, ८ शरीर में एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्रसंस्थान, १० वज्रवृषभनाराचसंहनन। ये दश अतिशय अरहंत भगवान के जन्म से ही उत्पन्न होते हैं॥ ६॥

## केवल ज्ञान के १० अतिशय।

योजन शत इकमें सुभिक्ष, गगनगमन मुख चार।
नहिं अदया उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार॥
सब विद्या ईसुरपनो, नाहिं बढ़ें नखकेश।
अनिमिषदृग छायारहित, दश केवलके वेश॥ ८॥

अर्थ—१ एकसौ योजन में सुभिक्षता, अर्थात् जिस स्थान में केवली हों उनसे चारों तरफ सौ सौ कोशमें सुकाल होता है, २ आकाश में गमन, ३ चार मुखों का दीखना, ४ हिंसाका अभाव, ५ उपसर्गरहित, ६ कवल (ग्रास) वर्जित आहार, ७ समस्त विद्याओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका नहीं बढ़ना, ९ नेत्रोंकी पलकें नहीं झपकना, १० छाया रहित। ये १० अतिशय केवलज्ञान उत्पन्न होने से प्रगट होते हैं॥ ८॥

## देव-कृत १४ अतिशय।

देव रचित हैं चार दश, अर्द्धमागधी भाष।
आपसमांहीं मित्रता निर्मल दिश आकाश॥९॥

विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु। तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्वं नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति। किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥ २१ ॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥ २२ ॥ त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस—मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ॥ २३ ॥ त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम्। योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २४ ॥ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात्। धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानात्व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥ २५ ॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ॥ २६ ॥ को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश। दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥ २७ ॥ उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्। स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमोवितानं बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥ २८ ॥ सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्। बिम्बम् वियद्विलसदंशुलतावितानं तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥ २९ ॥ कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते तव वपुः कलधौत—

कान्तम्। उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार—मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शान्तकौम्भम्॥ ३०॥ छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त-मुच्चैःस्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम्। मुक्ताफलप्रकरजाल-विवृद्धशोभम् प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम्॥ ३१॥ गम्भीर-तारस्वपूरितदिग्विभाग--स्त्रैलोक्यलोकशुभ संगमभूतिदक्षः। सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन् खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी॥ ३२॥ मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजातसन्तानकादिकुसु-मोत्करवृष्टिरुद्ध। गन्धोदबिन्दुशुभमन्दमरुत्प्रपाता दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा॥ ३३॥ शुम्भत्प्रभावलयभूरिवि-भा विभोस्ते लोकत्रयद्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती। प्रोद्यद्दिवा करनिरन्तरभूरिसंख्या दीप्त्याजयत्यपि निशामपि सोमसौम्या॥ ३४॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः। दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्वभाषास्वभाव-परिणामगुणैःप्रयोज्यः॥ ३५॥ उन्निद्रहेमनवपंङ्कजपुञ्जकान्ती पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ। पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति॥ ३६॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य यादृक्प्रभादिनकृतः प्रहतान्धकारा तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि॥ ३७॥ श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूलमत्तभ्रमद्भ्रमर-नादविवृद्धकोपम्। ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं दृष्ट्वा भयं भवती नो भवदाश्रितानाम्॥ ३८॥ भिन्नेभकुम्भगल-दुज्ज्वलशोणिताक्त मुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभाग। बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि नाक्रामति क्रमयुगाचलसं-श्रितं ते॥ ३९॥ कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम्। विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख-मापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम्॥ ४०॥ रक्तेक्षणं

समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् । आक्रामति क्रमयुगेण निरस्तशङ्कस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१ ॥ वल्गत्तुरङ्गगजगर्जितभीमनादमाजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् । उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥ ४२ ॥ कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगावतारतरणातुरयोधभीमे । युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥ ४३ ॥ अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपाठीनपीठभयदोल्बणवाडवाग्नौ । रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयानपात्रास्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्व्रजन्ति ॥४४ उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः । त्वत्पादपङ्कजरजोमृतदिग्धदेहा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥ आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः । त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥४६॥ मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहिसंग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् । तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां भक्त्या मया रुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम् । धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितमादिनाथस्तोत्रं समाप्तम् ।

रावणके सुत आदि कुमार। मुक्त गये रेवातट सार॥ कोड़ि पंच अरु लाख पचास। ते वंदौं धरि परम हुलास॥ ११॥ रेवानदी सिद्धवरकूट। पश्चिमदिशा देह जहँ छूट॥ द्वै चक्री दश कामकुमार। ऊठकोड़ि वंदौं भवपार॥ १२॥ बड़वानी बडनयर सुचंग। दक्षिण दिश गिरिचूल उतंग॥ इंद्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण। ते वंदौं भवसागरतर्ण॥ १३॥ सुवरणभद्रआदि मुनि चार। पावागिरिवर शिखरमझार॥ चेलना नदी तीरके पास। मुक्ति गये वंदौं नित तास॥ १४॥ फलहोड़ी बड़गाम अनूप। पश्चिमदिशा द्रोणगिरिरूप॥ गुरुदत्तादि मुनी सुर जहाँ। मुक्ति गये वंदौं नित तहाँ॥ २५॥ वालि महावालि मुनि दोय। नागकुमार मिले त्रय होय॥ श्रीअष्टापद मुक्तिमझार। ते वंदौं नित सुरतसँभार॥ १६॥ अचलापुरकी दिश ईशान। तहां मेढ़गिरि नाम प्रधान॥ साढ़ेतीन कोड़ि मुनिराय। तिनके चरन नमूं चित लाय॥ १७॥ वंशस्थल वनके ढिग होय। पश्चिमदिशा कुंथगिरि सोय॥ कुलभूषण देशभूषण नाम। तिनके चरणनि करूं प्रणाम॥ १८॥ जसरथराजा के सुत कहे। देशकलिंग पांचसौ लहे॥ कोटि शिला मुनि कोटिप्रमान। वंदन करूं जोर जुगपान॥ १९॥ समवसरण श्रीपार्श्व जिनंद। रेसंदीगिरि नयनानंद॥ वरदत्तादि पंच ऋषिराज। ते वंदौं नित धरमजिहाज॥ २०॥ तीन लोकके तीरथ जहाँ। नितप्रति वंदन कीजे तहाँ॥ मन वच कायसहित सिरनाय। वंदन करहिं भवकि गुणगाय॥ २१॥ संवत सतरहसौ इकताल। अश्विनसुदि दशमी सुविशाल॥ "भैया" वंदन करहिं त्रिकाल। जयनिर्वाणकांड गुणमाल॥ २२॥

इति निर्वाणकांड भाषा।

बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह

आयुकर्म ९.

पुनि चौदहें सुकलबल, बहत्तर तेरह हती।
इमि घाति वसुविधि कर्म पहुंच्यो, समयमें पंचमगती ॥ २२ ॥
लोकशिखर तनुवात,—वलयमहँ संठियो।
धर्मद्रव्यविन गमन न, जिहिं आगे कियो ॥
मयनरहित मूषोदर, अंबर जारिसो।
किमपि हीन निजतनुते, मयौ प्रभु तारिसो ॥
तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थ पर्जय क्षणक्षयी।
निश्चयनयेन अनंतगुण विवहार, नय वसु गुणमयी ॥
वस्तू स्वभाव विभावविरहित, शुद्ध परणति परिणयेा।
चिद्रूप परमानंदमंदिर, सिद्ध परमातम भये ॥ २३ ॥
तनुरमाणू दामिनिपर, सब थिर गये।
रहे शेष नखकेशरूप, जे परिणये ॥
तब हरिप्रमुख चतुरविधि, सुरगण शुभ सच्यो।
मायामई नखकेशरहित, जिनतनु रच्यो ॥
रचि अगर चंदनप्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो।
पदपतित अगनिकुमारमुकुटानल, सुविधि संस्कारिया ॥
निर्वाणकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भन 'रूपचंद्र, सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ २४

## मंगल गीत।

मैं मतिहीन भगतिवश, भावन भाइया।
मंगलगीतप्रबंध सु, जिनगुण गाइया ॥
जो नर सुनहिं वखानहिं, सुर धरि गावहीं।
मनवांछित फल सो नर, निहचै पावहीं ॥

पावहीं अष्टौ सिद्धि नवनिधि, मनप्रतीति जु आनहीं।
भ्रमभाव छूटैं सकल मन के, जिन स्वरूप सो जानहीं॥
पुनि हरहिं पातक टरहि विघन, सु होय मंगल नित नये।
भणि रूपचंद्र त्रिलोकपति जिन-देव चउसंघहिं जये॥ २५॥

# छह ढाला।

श्रीयुत पंडित दौलतरामजी कृत.

## सोरठा।

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिके॥

## प्रथमढाल—चौपाई छन्द १५ मात्रा।

जे त्रिभुवनमें जीव अनन्त। सुख चाहें दुखतें भयवन्त॥
तातें दुखहारी सुखकार। कहैं सीख गुरु करुणाधार॥ १॥
ताहि सुनो भवि मनथिर आन। जो चाहो अपनो कल्यान।
मोह महा मद पियो अनादि। भूल आपको भरमत बादि॥ २॥
तास भ्रमणकी है बहु कथा। पै कछु कहूं कही मुनि यथा॥
काल अनन्त निगोद मँझार। बीतो एकेन्द्री तन धार॥ ३॥
एक श्वासमें अठदशवार। जन्मो मरो भरो दुख भार॥
निकस भूमि जल पावक भयो। पवन प्रत्येक वनस्पति थयो॥४
दुर्लभ लहिये चिन्तामणी। त्यों पर्याय लही त्रस तणी॥
लट पिपील अलि आदि शरीर। धरधर मरो सही बहुपीर॥५॥

कबहूं पंचइन्द्री पशु भयो। मन विन निपट अज्ञानी थयो॥
सिंहादिक सेनी ह्वै क्रूर। निबल पशू हत खाए भूर॥ ६॥
कबहूं आप भयो बलहीन। सबलनकर खायो अति दीन॥
छेदन भेदन भूखरु प्यास। भार वहनहिम आतप त्रास॥ ७॥
वध बंधन आदिक दुख घणे। कोटि जीभकर जात न भणे॥
अतिसंक्लेश भावतें मरो। घोर शुभ्र सागर में परो॥ ८॥
तहाँ भूमि परसत दुख इसो। बीछू सहस डसे नहिं तिसो॥
तहाँ राध शोणित वाहिनी। कृम कुल कलित देह दाहनी॥९॥
सेमलतरु जुतदल असिपत्र। असि ज्यों देह विदारें तत्र॥
मेरुसमान लोह गलिजाय। ऐसी शीत उष्णता थाय॥ १०॥
तिल तिल करैं देह के खंड। असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचंड॥
सिंधु नीरतें प्यास न जाय। तौ पण एक न बूंद लहाय॥११॥
तीन लोक को नाज जो खाय। मिटे न भूख कणा न लहाय॥
ये दुख बहु सागरलों सहै। करमयोगतें नरगति लहै॥ १२॥
जननी उदर बसो नवमास, अंग सकुचतें पाई त्रास॥
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर॥१३॥
बालकपन में ज्ञान न लह्यो। तरुण समय तरुणी रति रह्यो॥
अर्द्धमृतक सम बूढ़ापनो। कैसे रूप लखै आपनो॥ १४॥
कभी अकाम निर्जरा करे। भवनत्रिक में सुर तन धरै॥
विषयचाह दावानल दह्यो। मरत विलाप करत दुःखसह्यो॥१५॥
जो विमानवासी हू थाय। सम्यक्दर्शनविन दुख पाय॥
तहँते चय थावर तन धरै। यों परिवर्तन पूरे करै॥ १६॥

## द्वितीय ढाल—पद्धरीछंद १५ मात्रा।

ऐसे मिथ्या दृग ज्ञानचर्ण। वश भ्रमत भरत दुःख जन्म मर्ण॥
ताते इनको तजिये सुजान। सुन तिन संक्षेप कहूं बखान॥ १॥

तीनो अभिन्न अखिन्न शुध, उपयोग की निश्चल दशा।
प्रगटी जहाँ दृगज्ञानव्रह्म ये, तीन धा एकै लशा ॥ ९ ॥
परमाण नय निक्षेपको न उद्योत, अनुभवमें दिखै।
दृग-ज्ञान सुख-बल मय सदा नहिं, आन भाव जो मो विखैं ॥
मैं साध्य साधक में अबाधक, कर्म अरतसु फल नितें ॥
चितपिंड चंद अखंड सुगुण करंड, च्युत पुनि कलनितैं ॥१०॥
यों चिन्त्य निजमें थिर भए तिन, अकथ जो आनन्द लह्यो ।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमिन्द्र कै नाहीं कह्यो ॥
तबही शुकल ध्यानाग्नि कर चउ, घात विधि कानन दह्यो ।
सब लख्यो केवल ज्ञान करि भवि, लोककूं शिवगम कह्यो ॥११॥
पुनि घाति शेष अघात विधि, छिनमाहिं अष्टम भू बसै ।
वसु कर्म विनसै सगुण वसु, सम्यक्त आदिक सब लसै ॥
संसार खार अपार पारा, वार तरि तीरहिं गये ।
अविकार अकल अरूप शुध, चिद्रूप अविनाशी भये ॥ १२ ॥
निजमाहिं लोक अलोक गुण, पर्याय प्रतिबिम्बित थये ।
रहि हैं अनन्तानन्त काल-यथा तथा शिव परणये ॥
धनि धन्य हैं जे जीव नर भव, पाय यह कारज किया ।
तिनही अनादी भ्रमण पंच, प्रकार तज वर सुख लिया ॥१३॥
मुख्योपचार दुभेद यों बड़, भाग रत्नत्रय धरैं ।
अरु धरेंगे ते शिव लहैं तिन, सुयशजल जगमल हरैं ॥
इमि जानि आलस हानि साहस, ठानि यह शिख आदरो ।
जबलों न रोग जरा गहै तब, लों जगत निजहित करो ॥ १४ ॥
यह राग आग दहै सदा तातैं समामृत पीजिये ।
चिर भजे विषय कषाय अब तो, त्याग निजपद लीजिये ॥
कहा रच्यो पर पदमें न तेरो, पद यहै क्यों दुख सहै ।
अब दौल होऊ सुखी स्वपद रचि, दाव मत चूको यहै ॥१५॥

### दोहा ।

इक नव वसु इक वर्षको, तीज सुकुल वैशाख ।
करयो तत्वउपदेश यह, लखि बुध जनकी भाख ॥ १ ॥
लघु धी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थ की भूल ।
सुधी सुधार पढ़ो सदा, जो पावो भव कूल ॥ २ ॥

# श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम् ।

(भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं)

प्रसिद्धष्टसहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरां पतिम् । नाम्नामष्ट-सहस्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ १ ॥

तद्यथा,—

श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः । स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥ २ ॥ विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः । विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनीश्वरः ॥ ३॥ विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः । विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥ ४ ॥ विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः । विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥ ५ ॥ जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः । अनन्त-चिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥ ६ ॥ युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः । परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७ ॥ स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः । मोहारि-विजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥ प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यवी-

श्वरः ॥ ९ ॥ सिद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः। सिद्धः सिद्धान्तविद्ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १० ॥ सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः। प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥ ११ ॥ विभावसुरसंभृष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः। परमात्मा परमज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः। पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥ श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाःशुचिः। तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥ अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः। मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः। अचलस्थितिरिक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत्। शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः। वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥ हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभावनः। प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥७ ॥ हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः। स्वयंप्रभुः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः। सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ९ ॥ सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः। विश्रुतो विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ १० ॥ सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात्। भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्या महेश्वराः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ २ ॥

॥४०॥ अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३ ॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥ ४४ ॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४५॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥४६॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसम्मूर्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्नशर्कराबालुकापङ्कधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥ २ ॥ नारकानित्याऽशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥३॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमासत्त्वानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरुनाभिवृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥ १२ ॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥ पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीकाहदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भावगाहः ॥ १५ ॥ दशयोजनावगाढः ॥ १६ ॥ तन्मध्ये योजनं

पुष्करम् ॥१७॥ तद्द्विगुणद्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥१९॥ गङ्गासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृता गङ्गासिन्ध्वादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्विंशतिपञ्चयोजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥२५॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरुवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु सङ्ख्येयकालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥३२॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्धे च ॥३४॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरुत्तरकुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे भाष्यमान्ये तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥ ३ ॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशपारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्बिषिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्नि वा-

तस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्य्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥ बहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाःकल्पातीताश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुग्रैवेयकेषुविजयवैजयन्तजयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गतिशरीरपरिग्रहाऽभिमानतोहीनाः ॥२१॥ पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥२२॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥२४॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥ स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिताः ॥२८॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ॥२९॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानितु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥३३॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥३४॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥३५॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥ भवनेषु च ॥३७॥ व्यन्तराणां च ॥३८॥ परा पल्योपममधिकम् ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥४२॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अजीवकाया धर्म्माधर्म्माकाशपुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥२॥ जीवाश्च ॥३॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥ निष्क्रियाणि च ॥७॥ असङ्ख्येयाः प्रदेशा धर्म्माधर्म्मैकजीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ताः ॥९॥ सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१०॥ नाणोः ॥११॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥१२॥ धर्म्माधर्म्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥१४॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥१५॥ प्रदेशसंहारविसर्प्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गतिस्थित्युपग्रहौ धर्म्माधर्म्मयोरुपकारः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः ॥१८॥ शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥१९॥ सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥२१॥ वर्त्तनापरिणामक्रियाः परत्वापरत्वे च कालस्य ॥२२॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्य संस्थानभेदतमश्छायाऽऽतपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥ भेदसङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥ सद्द्रव्य लक्षणम् ॥२९॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥ अर्पितानर्पितासिद्धेः ॥३२॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥३३॥ न जघन्यगुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३५॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३६॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥३७॥ गुणपर्य्ययवद्द्रव्यम् ॥३८॥ कालश्च ॥३९॥ सोऽनन्तसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥४२॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

संवाद्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्
सस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते ॥७॥

( पुष्प अक्षतादि क्षेपण करके वेदी के कोनों में चार कलशों की स्थापना करना चाहिये )

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना चन्दनेन
श्रीद्दक्पेयैरमीभिः शुचिसदकचयैरुद्गमैरेभिरुद्धैः।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनमिमं दीपयद्भिः प्रदीपै-
र्धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥८॥

( यह पढ़कर अर्घ चढ़ना चाहिये )

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटीसंलग्न-
रत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम् ।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैर्भ-
क्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाऽभिषिञ्चे ॥९॥

( शुद्ध जल की धार प्रतिमा पर छोड़ना चाहिये )

भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चै-
र्हस्तैश्च्युता सुरवरासुरमर्त्यनाथैः ।
तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्य धारा
सद्यः पुनातु जिनबिम्बगतैव युष्मान् ॥१०॥

( इक्षुरसकी धारा० )

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम-
देहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिम् ।
धारां घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां
वन्देऽर्हतां सुरभिसस्नपनोपयुक्ताम् ॥११॥

( घृत रस की धारा )

संपूर्णशारदशशाङ्कमरीचिजाल—
स्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः
क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिच्यमाणाः
संपादयन्तु मम चित्तसमीहितानि ॥१२॥
( दुग्ध रस की धारा० )

दुग्धाब्धिवीचिपयसंचितफेनराशि-
पाण्डुत्वकान्तिमवधारयतामतीव।
दध्ना गता जिनपतेः प्रतिमां सुधारा
संपद्यतां सपदि वाञ्छितसिद्धये वः ॥१३॥
( दही की धारा० )

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः
सर्वाभिरौषधिभिरर्हतमुज्ज्वलाभिः।
उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला-
कालेयकुङ्कुमरसोत्कटवारिपूरैः ॥१४॥
( सर्वौषधिरस की धारा० )

इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्यपुंसां
पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलैर्वसानैः।
संसारसागरविलङ्घनहेतुसेतुमा-
प्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥१५॥
( कलशों से अभिषेक )

द्रव्यैरनल्पघनसारचतुःसमाद्यै-
रामोदवासितसमस्तदिगन्तरालैः।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुङ्गवानां
त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥१६॥
( सुगंधित जल की धारा० )

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकं
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम्।
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासंवृद्धिसंपादकं
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन स्नानस्य गन्धोदकम् ॥१७॥

(यह श्लोक पढ़कर गन्धोदक लेकर मस्तक पर लगाना चाहिये)

इति लघुअभिषेक पाठ।

---

# विनयपाठ।

इहि विधि ठाड़ो होय के प्रथम पढ़े जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम नाशे कर्म जु आठ ॥१॥
अनंत चतुष्टय के धनी तुम ही हो शिरताज।
मुक्ति वधू के कंथ तुम तीन भुवन के राज ॥२॥
तिहुँ जग की पीड़ा हरण भवदधि शोषनहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के शिव सुखके करतार ॥३॥
हरता अघ अँधियार के करता धर्म प्रकाश।
थिरता पद दातार हो धरता निजगुण रास। ४॥
धर्मामृत उर जलधसों ज्ञान भानु तुम रूप।
तुमरे चरण सरोज को नावत तिहुँ जग भूप ॥५॥
मैं वन्दौं जिनदेव को कर अति निरमल भाव।
कर्म बंदके छेदने और न कोई उपाय ॥६॥
भविजन को भव कूप तें तुमही काढ़न हार।
दीनदयाल अनाथपति अन्तिमगुण भंडार ॥७॥
चिदानन्द निर्मल कियो धोय करम रज मैल।
शरल करीया जगत में भविजनको शिव गैल ॥८॥

तुम पद पंकज पूजतैं विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं विष निर विषता थाय ॥ ९ ॥
चक्री खग धर इंद्र पद मिलें आपतैं आप
अनुक्रम कर शिव पद लहै नेम सकल हन पाप ॥१०॥
तुम विन मैं व्याकुल भयो जैसे जल विन मीन
जन्म जरा मेरी हरो करो मोह स्वाधीन ॥११॥
पतित बहुत पावन किये गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे कुधी सु जय जय जय जिनदेव ॥१२॥
थकी नाव भवि दधि विषैं तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु सो जय जय २ जिनदेव ॥१३॥
राग सहित जग में रुले मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबै मेटो राग कुटेव ॥१४॥
कित निगोद कित नारकी कित तिर्यंच अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो पायो जिनवर थान ॥१५॥
तुमको पूजें सुरपति अहिपति नरपति देव ॥
धन्य भाग मेरो भयो करन लगो तुम सेव ॥१६॥
अशरण के तुम शरण हो निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिंधु में खेव लगायो पार ॥१७॥
इंद्रादिक गणपति थकी तुम विन्तो भगवान।
विनती आप निहारि कै कीजे आप समान ॥१८॥
तुमरी नेक सुदृष्ट सें जग उतरत है पार।
हाहा डूबो जात हौं नेक निहार निकार ॥१९॥
जो मैं कहा हूं और सों तो न मिटै उर भार।
मेरी तो मोसेां बनी तातें करत पुकार ॥२०॥
वंदौं पाचों परम गुरु सुरगुरु वंदत जास।
विघन हरन मंगल करन पूरन परम प्रकाश ॥२१॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा

सद्वारिगन्धाक्षतपुष्पजातनैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम्॥९॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते
त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः।
पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणा-
स्ते भव्याः सकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम्॥१०॥

इत्याशीर्वादः ( पुष्पांजलि क्षेपण करना )

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः॥१॥

चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः।
श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः॥२॥
अनन्तो धर्मनामा च शान्तिः कुन्थुर्जिनोत्तमः।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत्॥३॥

हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥४॥
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥५॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य सङ्घस्य शान्तिं कुर्वन्तु शाश्वतिम् ॥६॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥७॥

( पुष्पांजलि क्षेपण )

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥८॥

( पुष्पांजलि क्षेपण )

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥९॥

( पुष्पांजलि क्षेपण )

## अथ देव जयमाला प्राकृत ।

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु ।
तुहु चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥१॥

जय रिसह रिसीसर णमियपाय । जय अजिय जियंगमरोसराय । जय संभव संभवकय विआय । जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥२॥

जय सुमइ सुमइ सम्मयपयास । जय पउमप्पह पउमा-णिवास । जय जयहि सुपास सुपासगत्त । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥

जय पुप्फयंत दंतंतरंग । जय सीयल सीयलवयणभंग । जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज । जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज ॥ ४ ॥

जय विमल विमलगुणसेढिठाण । जय जयहि अणंताणं-तणाण । जय धम्म धम्मतित्थयर संत । जय सांति सांति विहियायवत्त ॥ ५ ॥

जय कुंथु कुंथुपहुअंगिसदय । जय अर अर माहर विहियसमय । जय मल्लि मल्लिआदामगंध । जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध ॥ ६ ॥

जय णमि णमियामरणियरसामि । जय णेमि धम्म-रहचक्कणेमि । जय पास पासछिंदणकिवाण । जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण ॥ ७ ॥

वत्ता ।

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं अणहणहिं अणाइहिं, समियकुवाइहिं, पणविमि अरहंतावलिहिं ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

इहभाँति अर्घ चढ़ाय नित भवि, करत शिवपंकति मचूं
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा- वसुविधि अर्घ सँजोयके, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परम पद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥६॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घं निर्वपामिति स्वाहा ॥६॥

## अथ जयमाला।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥ १ ॥

## पद्धड़ि छन्द।

चउकर्मकि त्रेसठ प्रकृति नाशि। जीते अष्टादशदोषराशि जे परम सगुण हैं अनन्त धीर। कहवत के छयालिस गुण गँभीर ॥ २ ॥

शुभसमवसरण शोभा अपार। शत इन्द्र नमत कर सीस धार। देवादिदेव अरहन्त देव। वन्दों मनवचतनकरि सुसेव ॥३॥

जिन की धुनि ह्वै ओंकाररूप। निर अक्षरमय महिमा अनूप। दश अष्ट महाभाषा समेत। लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥

सो स्याद्वादमय सप्तभंग। गणधर गूंथे बारहसुअंग रवि शशि न हरै सो तम हराय। सो शास्त्र नमौंवहु प्रीति लाय ॥ ५ ॥

गुरू आचारज उवझाय साध। तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध। संसारदेहवैराग धार। निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥

गुण छत्तिस पचिस आठ बीस। भव तारन तरन जिहाजईस। गुरु की महिमा वरनी न जाय। गुरुनाम जपों मनवचकाय ॥ ७ ॥

सोरठा-कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै
'द्यानत' सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

## बीस तीर्थंकर पूजा भाषा।

दीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थं करबीस
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि शीस ॥ १

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरा! अत्र अवतरत अवतरत। संवौषट्।

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरा! अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः।
ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरा! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत। वषट्।

इन्द्रफणीन्द्रनरेंद्र वंद्य, पद निर्मलधारी।
शोभनीक संसार, सार गुण हैं अधिकारी।

क्षीरोदधिसम नीरसों ( हो ), पूजों तृषा निवार।
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेहमँझार॥
श्रीजिनराज हो भव, तारणतरणजिहाज॥१॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

यदि बीस पुंज करना हो, तो इस प्रकारमंत्र पढ़ै

ॐ ह्रीं सीमन्धर-युगंधर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीर-महाभद्र-देवयशाऽजितवीर्य्येति विंशितिविद्यमानतीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

तीन लोक के जीव, पाप आताप सताये।
तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये॥
बावन चंदनसों जजूं (हो) भ्रमनतपन निरवार। सीमं०॥२॥

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय-चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी
तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जग नामी॥

तंदुल अमल सुगंधसों ( हो ), पूजों तुम गुणसार। सीमं०॥३॥

ॐ० ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०॥

भविक-सरोज-विकासि, निंद्यतमहर रविसे हो।
जति श्रावक आचार कथन को, तुम्हीं बड़े हो॥

फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदन प्रहार। सीमं० ॥४॥

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व०॥

कामनाग विषधाम--नाशको गरुड़ कहे हो।
छुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो।
नेवज बहु घृत मिष्टसों (हो), पूजों भूख विडार। सीमं०॥५॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०॥

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहिं भरयो है।
मोह महातम घोर, नाश परकाश करयो है॥

पूजों दीपप्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार। सीमं०॥६॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनायदीपं निर्व०॥

कर्म आठ सब काठ,--भार विस्तार निहारा।
ध्यान अगनिकर प्रगट, सरब कीनों निरवारा।

धूप अनूपम खेवतें (हो), दुख जलै निरधार। सीमं०॥७॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व०॥

ध्यान धरें सो पाइये परम सिद्ध भगवान ॥३॥
इत्याशीर्वादः ( पुष्पांजलिं क्षिपेत् )

## सिद्धपूजाका भवाष्टक।

निजमनोमणिभाजनभारया समरसैकसुधारसधारया।
सकलोधकलारमणीयकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥१॥ जलम्

सहजकर्मकलङ्कविनाशनैरमलभावसुभाषितचन्दनैः।
अनुपमानगुणावलिनायकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥२॥ चन्दनम्।

सहजभावसुनिर्मलतन्दुलैःसकलदोषविशालविशोधनैः।
अनुपरोधसुबोधनिधानकं सहजसिद्धमहं परिपूजये॥३॥अक्षतान्

समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया।
परमयोगबलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥४॥ पुष्पम्।

अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकैर्विहितजातजरामरणान्तकैः।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥५॥ नैवेद्यम्।

सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकै रुचिविभूतितमः प्रविनाशनैः।
निरवधिस्वविकाशविकासनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥६॥ दीपम्।

निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं सहजसिद्धमहं परिपूजये॥७॥धूपम्।

परमभावफलावलिसम्पदा सहजभावकुभावविशोधया। निजगुणाऽऽस्फुरणात्मानिरञ्जनं सहजसिद्धमहंपरिपूजये ॥८॥ फलम्।

नैत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यन्तबोधाय वै
वार्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः।
यश्चिन्तामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत्
सिद्धं स्वादुमगाधबोधमचलं संचर्चयामो वयम् ॥६॥
अर्घ्यम्।

## सोलहकारणका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे ॥१॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

## दशलक्षणधर्मका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्द्दवार्जव-सत्यशौचसंयमतपत्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्य्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा.

## रत्नत्रयका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनरत्नमहं यजे ॥३॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

# बीस तीर्थंकर पूजा की अचरी।

भव अटवी भ्रमत बहु जनम धरत अति मरण करत
लह जरा की बिपत अति दुःख पायो।

तातें जल ल्यायो तुम ढिग आयो शांत सुधारस अब पायो ॥ श्री बीस जिनेश्वर द्या निधेश्वर जगत महेश्वर मेरी बिपत हरो। भव संकट खंडो आनंद मंडो मोहि निजातम सुद्ध करो ॥१॥ पर चाह अनल मोह दहत सतत अति दुःख सहत भव विपत भरत तुम ढिग आयो। तातें ले बावन तुम अति पावन दाह मिटावन सुक्ख करो ॥२॥ फिर जनम धरत फिर मरण करत भव भ्रमर भ्रमत बहु-नाटक नट अति थकित भयो। तातें शुभ अक्षित तुम पद अर्चत भव भय तर्जित सुखद भयो ॥श्री०॥३॥ मोह काम ने सतायो चारों वामा उर लायो सुध बुध बिसरायो बहु बिपत गमायो नाना बिधकी। तातें धर फूलं तुम निरशूलं मोह बिशूलं कर अबकी ॥श्री०। ४ मोह छुधा ने सतायो तब आशना बढ़ायो बहु याचना करायो तिहुँ पेट न भरायो अति दुःख पायो। तातें चरू धारी तुम निरहारी मोह निराकुल पद बगसो ॥श्री०॥ ५ ॥ मोहतम की चपेट तातें भयो हों अचेत कियो जड़ ही से हेत भूलो अप्पा पर भेद तुमशरण लही। दीपक उजयारों तुम ढिन धारो स्वपर प्रकासों नाथ सही ॥श्री०॥ ६ कर्म ईंधन है भारी मोंको कियो है दुखारी ताकी बिपत गहाई नेक सुध हू न धारी तुम चरण नमूं ॥ ताते वर धूपं तुम शिव रूपं कर निज भूपं नाथ हमें ॥श्री०॥७॥ अंतराय दुःख दाई मेरी शक्ति छिपाई मोसों दीनता कराई मोंकों अति दुःख दाई भयो आज लों प्रभू। तातें फल-ल्यायो तुम ढिग आयो मोक्ष महा फल देव प्रभू ॥श्री०॥८॥ आठों कर्मों ने सतायो मोंकों दुःख उपजायो मोसों नाचहू न-चायो भाग तुम पिसावायो अब बच जाऊँ। बसु द्रव्य समारी तुम ढिग धारी हे भव तारी शिव पाऊँ ॥ श्री बीस जिनेश्वर दया निधेस्वर जगत महेश्वर मेरी बिपत हरो। भव संकट

चौपाई।

कंचनझारी निरमल नीर। पूजौं जिनवर गुनगंभीर।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥
दरशविशुद्धि भावना भाय। सोलह तीर्थंकरपददाय
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ १॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं नि०॥

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय।
परम हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरश०॥ २॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं०॥

तंदुल धवल सुगंध अनूप। पूजौं जिनवर तिहुँजगभूप।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरशवि०॥ ३॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तायेअक्षतान् नि०॥

फूल सुगंध मधुपगुंजार। पूजौं जिनवर जगआधार।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरश०॥ ४॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं॥

सदनेवज बहुविध पकवान। पूजौं श्रीजिनवर गुणखान।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरशवि०॥ ५॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं॥

दीपकजोति तिमर छयकार। पूजूं श्रीजिन केवलधार।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥
दरशविशुद्ध भावना भाय। सोलह तीर्थंकरपद पाय।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

अगर कपूर गंध शुभ खेय। श्रीजिनवरआगें महकेय।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार। पूजौं जिन वांछितदातार।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामी० ॥ ८ ॥

जल फल आठों दरव चढ़ाय। 'द्यानत' वरत करौं मनलाय
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति ॥

## अथ जयमाला।

दोहा।

षोड़शकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास।
पापपुण्य सब नाशकै, ज्ञानभान परकास ॥२॥

चौपाई १६ मात्रा।

दरशविशुद्ध धरै जो कोई। ताको आवागमन न होई
विनय महाधारै जो प्रानी। शिववनिताकी सखी बखानी ॥२॥
शील सदा दृढ़ जो नर पालैं। सो औरन की आपद टालैं ॥
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं। ताकै मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥
जो संवेगभाव विसतारै। सुरगमुकतिपद आप निहारै ॥

दान देय मन हरष विशेखै। इह भव जस परभव सुख देखै॥४॥
जो तप तपै खपै अभिलाषा। चूरै करमशिखर गुरु भाषा॥
साधुसमाधि सदा मन लावै। तिहुँजगभोगि भोग शिव जावै॥५॥
निशदिन वैयावृत्य करैया। सौ निहचै भवनीर तिरैया॥
जो अरहंतभगति मन आनै। सो मन विषय कषाय न जानै॥६॥
जो आचारजभगति करै है। सो निर्मल आचार धरै है॥
बहुश्रुतवंतभगति जो करई। सो नर संपूरन श्रुत धरई॥७॥
प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता। लहै ज्ञान परमानँददाता॥
षट्आवश्य काल जो साधै। सो ही रतनत्रय आराधै॥८॥
धरमप्रभाव करैं जे ज्ञानी। तिन शिवमारग रीति पिछानी॥
वत्सलअंग सदा जो ध्यावै। सो तीर्थंकरपदवी पावै॥९॥

दोहा।

एही सोलहभावना, सहित धरै व्रत जोय।
देवइन्द्रनरवंद्यपद, 'द्यानत' शिवपद होय॥१०॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामी०

( अर्घ्यके बाद विसर्जन भी करना चाहिये )

## दशलक्षणधर्म पूजा।

### अडिल्ल।

उत्तम छिमा मारदव आरजवभाव हैं।
सत्य सौच संजम तप त्याग उपाव हैं॥
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं।
चहुँगतिदुखतैं काढ़ि मुकतकरतार हैं॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्रावतर अवतर ! संवौषट्
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव
भव। वषट्।

सोरठा।

हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभ।
भवआताप निवार, दसलक्षन पूजों सदा॥ १॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामि०॥२॥
चंदन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा। भवआ० ॥२॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चंदनं निर्वपामि०॥२॥
अमल अखंडित सार, तंदल चंद्रसमान शुभ॥ भवआ० ॥३॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामि०॥३॥
फूल अनेकप्रकार, महकैं ऊरधलोक लों। भवआ० ॥४॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि० ॥४॥
नेवज विविध प्रकार, उत्तम षटरससंजुउत॥ भवआ०॥ ५॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि० ॥५॥
बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी॥ भवआ०॥ ६॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामि०॥ ६॥
अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगंधता॥ भवआ० ॥७॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि०॥ ७॥
फलकी जाति अपार, 'द्यानत' नयन मनमोहने॥ भवआ० ॥८॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि०॥ ८॥
आठों दरव सँवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसों॥ भवआ०॥९॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घ्यं निर्वपामि०॥ ९॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥

तमहर उज्जल जोति जगाय। दीपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो दीपं नि० ॥

खेउं अगर परिमल अधिकाय। धूपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो धूपं नि० ॥

सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय। फलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो फलं नि० ॥

आठ दरवमय अरघ बनाय। 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचौं० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि० ॥

## अथ जयमाला।

सोरठा।

प्रथम सुदर्शन स्वाम, विजय अचल मन्दर कहा।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जग में प्रगट ॥ १ ॥

वेसरी छन्द।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै। भद्रशाल वन भूपर छाजै ॥
चैत्यालय चारों सुखकारी। मनवचतन वंदना हमारी ॥२॥

ऊपर पंच शतकपर सोहै। नंदनवन देखत मन मोहै ॥चै० ॥३॥
साढ़े बासठ सहसउंचाई। वन सुमनस शोभै अधिकाई ॥चै॥४॥
ऊंचा जोजन सहस छतीसं। पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ॥चै०।५।
चारों मेरु समान बखानो। भूपर भद्रसाल चहुं जानो ।चै०॥६॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतन वंदना हमारी ।चै० ॥७।
ऊंचे पांच शतकपर भाखे। चारों नंदनवन अभिलाखे ।चै०। ।८।
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतन वंदना हमारी ।चै०। ।६।
साढे पचवन सहस उतंगा। वन सोमनस चार बहुरंगा ।चै०।१०।
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतनवंदना हमारी ।चै०॥११॥
उचे सहस अट्ठाइस बताये। पांडुक चारों वन शुभ गाये ।चै०।१२
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतनवंदना हमारी ।चै०॥१३।
सुरनर चारन वंदन आवैं। सो शोभा हम किह मुख गावैं,चै०।१४
चैत्यालय अस्सी सुखकारी। मनवचतनवंदना हमारी ।चै०।१५।

दोहा।

पंचमेरकी आरती, पढ़ै सुनै जो कोय।
'धानत' फल जानैं प्रभू, तुरत महासुख होय ॥१६॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥

## रत्नत्रयपूजा।

दोहा।

चहुंगतिफनिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार
शिवसुखसुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार ॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय! अत्रवतरावतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितं भव भव। वषट्

सोरठा।

क्षीरोदधि उनहार, उज्जल जल अति सोहना।
जनमरोगनिरवार, सम्यकरत्नत्रय भजों ॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलं निर्वपामि ॥१॥

चंदन केसर गारि, परिमल महा सुरंगमय। जन्मरोग० ॥२॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामि० ॥२॥

तंदुल अमल चितार, वासमती सुखदासके। जन्मरो०॥३॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामि० ॥३॥

महकैं फूल अपार, अलि गुंजें ज्यों थुति करैं। जन्मरो० ॥४॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि० ॥४॥

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धता। जन्मरो० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०
दीपरतनमय सार, जोत प्रकाशै जगत में। जन्मरो० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व०
धूप सुवास विथार, चन्दन अर्घ कपूरकी। जन्मरो० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥ ७ ॥
फलशोभा अधिकार, लौंग छुआरे जायफल। जन्मरो० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि० ॥८॥
आठदरव निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये। जन्मरो० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि० ॥९॥

सम्यकदरसनज्ञान, व्रत शिवमग तीनों मयी।

चार सेाले मिले सर्व बावन लहे ॥
एक इक सीसपर एक जिनमंदिरं । भौन० ॥ ६ ॥
बिंच अठ एकसौ रतनमइ सोह ही ।
देवदेवी सरव नयनमन मोह ही ॥
पांचसै धनुष तन पद्मआसनपरं । भौन० ॥ ७ ॥
लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं ।
स्यामरँग भौंह सिरकेश छवि देत हैं ॥
वचन बोलत मनों हँसत कालुपहरं । भौन ० ॥ ८ ॥
कोटिशशि भानद्युति तेज छिप जात है ।
महावैराग परिणाम ठहरात है ॥
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधरं । भौन० ॥९॥

सोरठा ।

नन्दीश्वर जिनधाम, प्रतिमामहिमा को कहै ।
'द्यानत' लीनों नाम, यहै भगति सब सुख करै ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

( अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये । )

# चतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रपूजा ।

सोरठा ।

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।
सिद्ध भूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत । संवौषट् । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि! अत्र तिष्ठत तिष्ठत । ठः ठः । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाण

क्षेत्राणि अत्र मम सन्निहितानि भवत भवंत। वषट्।

गीता छंद।

शुचि क्षीरदधिसम नीर निरमल, कनकझारीमें भरौं।
संसारपार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं॥
सम्मेदगिरि गिरनार चंपा, पावापुरि कैलासकौं।
पूजौं सदा चौवीसजिननिर्वाणभूमिनिवासकौं॥ १॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

केसर कपूर सुगंध चंदन, सलिल शीतल विस्तरौं।
भवपापको संताप मेटौ, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥२॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

मौंतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनँदधरि तरौं।
औगुनहरौ गुनकरौ हमको, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥३

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

शुभफूलरास सुवासवासित, खेद सब मनकी हरौं।
दुखधाम काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥४

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

नेवज अनेकप्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौं॥
यह भूखदूखन टारि प्रभुजी, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥५

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

दीपक प्रकाश उजास उज्जल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
संशयविमोहविभरम-तमहर, जोरकर विनती करौं। सम्मे०६

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥७

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

बहु फल मँगाय चढ़ाय उत्तम, चारगतिसों निरवरौं।
निहचै मुकतफल देहु मोकौं, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०८॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगततैं, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥९

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

## अथ जयमाला।

सोरठा।

श्रीचौवीसजिनेश, गिरिकैलासादिक नमों।
तीरथमहाप्रदेश, महापुरुषनिरवाणतैं ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा।

नमों रिषभ कैलास पहारं। नेमिनाथगिरिनार निहारं ॥
वासुपूज्य चंपापुर वंदौं। सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥२॥
वंदौं अजित अजितपददाता। वंदौं संभवभवदुखघाता ॥
वंदौं अभिनंदन गणनायक। वंदौं सुमति सुमतिके दायक ॥३॥
वंदौं पदम मुकतिपदमाधर। वंदौं सुपार्स आशपासा हर ॥
वंदौं चंदप्रभ प्रभु चंदा। वंदौं सुविधिसुविधिनिधिकंदा ॥४॥
वंदौं शीतल अघतपशीतल। वंदौं श्रियांसश्रियांसमहीतल ॥

चौपाई ( १६ मात्रा )

एक ज्ञान केवल जिन स्वामी । दो आगम अध्यातम नामी ॥
तीन काल विधि परगट जानी । चार अनन्तचतुष्टय ज्ञानी ॥२॥
पंच परावर्तन परकासी । छहों दरवगुनपरजयभासी ॥
सातभंगवानी परकाशक । आठों कर्म महारिपुनाशक ॥ ३ ॥
नव तत्त्वनके भाखनहारे । दश लच्छनसौं भविजन तारे।
ग्यारह प्रतिमा के उपदेशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥ ४ ॥
तेरहविधि चारित के दाता । चौदह मारगना के ज्ञाता ॥
पंद्रह भेद प्रमादनिवारी । सोलह भावन फल अविकारी ॥५॥
तारे सत्रह अंक भरत भुव। ठारे थान दान दाता तुव ॥
भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन । वीस अंक गणधरजीकी धुन॥६॥
इकइस सर्व घातविधि जानै । बाइस बंध नवम गुन थानै ॥
तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर । सो पूजै चौवीस जिनेश्वर ॥७॥
नाश पचीस कषाय करी हैं। देशघाति छब्बीस हरी हैं ॥
तत्त्व दरब सत्ताइस देखे । मति विज्ञान अठाइस पेखे ॥८॥
उनतिस अंक मनुष सब जाने । तीस कुलाचल सर्व बखाने ॥
इकतिस पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समाइक टारे ॥९॥
तेतिस सागर सुखकर आये । चौंतिस भेद अलब्धि बताये ॥
पैंतिस अच्छर जप सुखदाई । छत्तिस कारन-रीति मिटाई॥१०॥
सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें । अठतिस पद लहि नरक अपुनमें
उनतालीस उदीरन तेरम । चालिस भवन इंद्र पूजैं नम ॥११॥
इकतालीस भेद आराधन । उदै बियालिस तीर्थंकर मंन ॥
तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं । द्वार चवालिस नर चौथेमहिं॥१२॥
पैंतालीस पल्य के अच्छर । छियालीस बिन दोष मुनीश्वर ॥
नरक उदै न छियालीस मुनिधुन । प्रकृति छियालीस नाश दशम गुन ॥ १३ ॥

छियालीसघन सजु साज भुव। अंक छियालीस सिरसेा कहिकुव
भेद छियालीस अंतर तपवर। छियालीस पूरन गुनजिनवर॥१४॥

## अडिल्ल।

मिथ्या तपन निवारन चंद समान हो।
मोहतिमिर वारनको कारन भान हो॥
काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो।
'धासन' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो॥ १॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-जिनेन्द्रभगवभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामि॥

( पूर्णार्घ्यके वाद विसर्जन करना चाहिये )

इति श्रीजिनेन्द्रपूजा समाप्ता।

# सरस्वती पूजा।

दोहा।

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जड़रीति।
भवसागरसों ले तिरै, पूजैं जिनवचप्रीति॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। अत्र मम सन्निहितेा भवभव।। वषट्।

त्रिभंगी।

छीरोदधि गंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखगंगा।
भरि कंचन झारी, धार निकारी तृखा निवारी, हित चंगा॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे धुनि, ज्ञानमई।
सेा जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामि इति स्वाहा ॥ १ ॥

करपूर मंगाया, चंदन आया, केशर लाया, रंग भरी ।
शारदपद वंदों, मन अभिनंदों, पापनिकंदों, दाह हरी॥तीर्थ०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अतिअनुमोदं, चंदसमं ।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मातममं॥तीर्थ०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

बहुफूलसुवासं, विमलप्रकाशं, आनँदरासं, लाय धरे ।
मम काममिटायौ,शील बढ़ायौ,सुख उपजायौ,दोषहरै॥तीर्थ०४॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि॥४॥

पकवान बनाया,बहुघृत लाया, सब विध भाया, मिष्ट महा ।
पूजूं थुति गाऊं. प्रीति बढ़ाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहा॥तीर्थ०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

करि दीपक ज्योतं, तमक्षय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै ।
तुम हो परकाशक,भरमविनाशक,हमघट भासक,ज्ञान बढ़ै॥तीर्थ०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर, धूप मनोहर, खेवत हैं ।
सब पाप जलावैं,पुण्य कमावैं,दास कहावैं,सेवत हैं ॥तीर्थ०॥७॥

ॐह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामि॥७॥

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं ।
मनवांछित दाता, मेट असाता, तुम गुनमाता, ध्यावत हैं॥तीर्थ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि॥८॥
नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्वलभारी मोल धरै।
सुभगंधसम्हारा, वसननिहारा, तुमतर धारा, ज्ञान करै॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्य भई॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामि॥९।
जलचंदन अच्छत, फूलचरूचत, दीप धूप अति, फल लावै।
पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर ध्यानत, सुख
पावै॥ तीर्थं० ॥१०॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्व-
पामि॥ १० ॥

## अथ जयमाला।

सोरठा।

ओङ्कार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै॥

वेसरी।

पहला आचारांग बखानो। पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजा सूत्रकृतं अभिलाषं। पद छत्तीस सहस गुरु भाषं॥१॥
तीजा ठाना अंग सुजानं। सहस वियालिस पदसरधानं॥
चौथो समवायांग निहारं। चौसठ सहस लाख इकधारं॥२॥
पंचम व्याख्याप्रगपति दरशं। दोय लाख अट्ठाइस सहसं।
छट्ठा ज्ञातृकथा विस्तारं। पांचलाख छप्पन हजारं॥ ३॥
सप्तम उपासकाध्ययनंगं। सत्तर सहस ग्यारलख भंगं।
अष्टम अन्तकृतंदस ईसं। सहस अठाइस लाख तेइसं॥ ४॥
नवम अनुत्तरदश सुविशालं। लाख बानवे सहस चवालं।

दशम प्रश्नव्याकरण विचारं। लाख तिरानवैं सोलहजारं ॥५॥
ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं। एक कोड़ चौरासी लाखं।
चार कोड़ि अरु पन्द्रह लाखं। दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥६॥
द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं। इकसौ आठ कोड़ि पन वेदं॥
अड़सट लाख सहस छप्पन हैं। सहित पंचपद मिथ्याहनहैं ॥७॥
इक सौ बारह कोड़ि बखानो। लाख तिरासी ऊपर जानो।
ठावन सहस पंच अधिकाने। द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
कोड़ि इकावन आठहि लाखं। सहस चुरासी छहसौ भाखं॥
साढ़े इकीस शिलोक बताये। एक एक पद के ये गाये॥ १ ॥

घत्ता

जा बानी के ज्ञान में, सूझै लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हौं धोक॥

श्रीजिनमुखोद्गतसरस्वत्यै देव्यै पूर्णार्घ्यं निर्वपामि।

इति सरस्वतीपूजा।



## गुरुपूजा।

दोहा

चहुँ गति दुखसागरविषै, तारनतरनजिहाज।
रतनत्रयनिधि नगर तन, धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह! अत्रावतरावतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह! अत्र

उर्जयन्त गिरिनाम तस, कहो जगति विख्यात।
गिरिनारी तासे कहत, देखत मन हर्षात ॥ ३ ॥

## अड़िल्ल।

गिरि सुव्रत सुभगाकार है। पञ्चकूट उतंग सुधार है॥
वन मनोहर शिला सुहावनी। लखत सुंदर मन कोभावनी ॥४॥
और कूट अनेक बने तहां। सिद्ध थान सुअति सुन्दर जहां।
देखि भविजन मन हर्षावते। सकल जन वन्दन कोआवते ॥५॥

### त्रिभंगी छन्द।

तहां नेम कुमारा, व्रत तप धारा, कर्म विदारा, शिव पाई।
मुनि कोडि बहत्तर, सात शतक धर, ता गिरि ऊपर सुखदाई॥
भये शिवपुरवासी, गुण के राशी, विधिथित नाशी, ऋद्धिधरा।
तिनके गुण गाऊं, पूज रचाऊं, मन हर्षाऊं, सिद्धि करा॥

### दोहा।

ऐसो क्षेत्र महान, तिहि पूजत मन वच काय।
स्थापत त्रय वारकर, तिष्ट तिष्ट इत आय॥
ॐ ह्रीं श्री गिरिनारि सिद्धिक्षेत्रेभ्यो॥ अत्र अत्रवतरः सम्वौषटाह्वाननम्। अत्र तिष्ट तिष्ट ठः ठः स्थापनम्॥ अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट् सन्धीकरण।

## अथाष्टकं।

### माधवी वा किरीट छन्द।

लेकर नीरसुक्षीरसमान महा सुखदान सुप्रासुक भाई।
दें त्रय धारजजों चरणों हरना मम जन्मजरा दुःखदाई॥

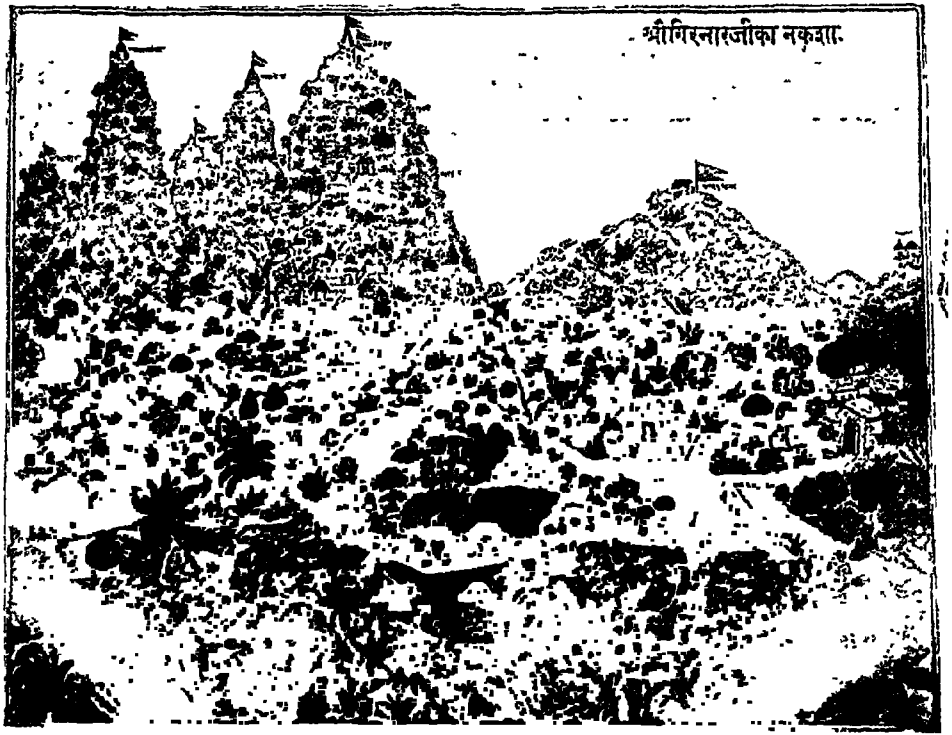
श्रीगिरनारजीका नकशा.

श्री अतिशयक्षेत्र पपौराजी [ टीकमगढ़ ]

पढ़े सुने जो प्रीति से, सो नर शिवपुर जाय ॥ १७ ॥

इत्याशीर्वादः।

इतिश्री सोनागिरि पूजा सम्पूर्ण।

---

# रविव्रत पूजा।

## अडिल्ल।

यह भवजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही। करहु भव्यजन लोग, सुमन देकें सही ॥ पूजों पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग लगायकैं। मिटै सकल सन्ताप मिलै निध आय कैं ॥ मति सागर इक सेठ ग्रन्थन कही। उनहीने यह पूजा कर आनन्द लही ॥ ताते रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये। सुख संपति सन्तान, अतुल निध लीजिये। दोहा। प्रणमो पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड़ सिर नाय। परभव सुख के कारने, पूजा करूं बनाय ॥ एतवार व्रत के दिना, एक ही पूजन ठान। ता फल सम्पति लवें, निश्चय लीजे मान ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अत्रअवतार अवतर तिष्ठ २ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो।

## अष्टकं।

उज्जल जल भरकें अति लायो रतन कटोरन माहीं। धार देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाहीं ॥ पारसनाथ जिनेश्वर पूजों रविव्रत के दिन माई। सुख सम्पति बहु होय तुरतही, आनन्द मंगलदाई ॥ ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ मलया-

गिर केशर अति सुन्दर कुमकुम रंग बनाई। धार देत जिन चरनन आगे भव आताप नसाई ॥ पारसनाथ० ॥ सुगंधं ॥ मोती सम अति उज्जल तन्दुल ल्यावो नीर पखारो। अक्षय पद के हेतु भावसो श्री जिनवर ढिग धारो ॥ पारस० ॥ अक्षतं ॥ बेला अरमच कुन्द चमेली पारजात के ल्यावो। चुन चुन श्री जिन अग्र चढ़ाऊं मनवांछित फल पावो ॥ पारस० ॥ पुष्पं ॥ बावर फेनी गोजा आदिक घृत में लेत पकाई। कंचन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई ॥ पारस ॥ नैवेद्य ॥ मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत जगाई। जिनके आगे आरति करके मोह तिमिर नस जाई ॥पारस० ॥ दीपं ॥ चूरन कर मलयागिर चन्दन धूप दशांक बनाई। तट पावक में खेय भावसों कर्मनाश हो जाई ॥ पारसनाथ० ॥ धूपं ॥ श्रीफल आदि बदाम सुपारी भांत भांत के लावो। श्री जिन चरन चढ़ाय हरष कर तातें शिव फल पावो ॥ पारस० ॥ फलं ॥ जल गंधादिक अष्ट दरब ले अर्घ बनावो भाई। नाचत गावत हर्ष भाव सो कंचन थार भराई ॥पारस॥ अर्घं॥ गीतका छंद ॥ मन वचन काय त्रिशुद्ध करके पार्श्वनाथ सु पूजिये। जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिचन्त सुहूजिये ॥ पूज्य पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातारजी। जे करत हैं नरनार पूजा लहत सुःख अपारजी ॥ पूर्णं अर्घं ॥ दोहा ॥ यह जगमें विख्यात है, पारसनाथ महान। जिन गुनकी जयमालका भाषा करौं बखान। ॥ पद्धरी छंद ॥ जय जय प्रणमो श्री पार्श्व देव। इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ॥ जय जय सुबनारस जन्म लीन। तिहुं लोक विषे उद्योत कीन ॥१॥ जय जिनके पितु श्री विश्वसेन। तिनके घर भये सुख चैन एन ॥ जय वामादेवी माय जान। तिनकैं उपजे पारस महान ॥ २ ॥ जय तीन लोक

आनन्द देन। भविजनके दाता भये एन॥ जय जिनने प्रभु का शरन लीन। तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन॥ ३॥ जय नाग नागनी भये अधीन। प्रभु चरणन लाग रहे प्रवीन॥ तजके सो देत स्वर्गे सु जाय! धरनेंद्र पद्मवति भये आय॥४॥ जे चोर अंजना अधम जान। चोरी तज प्रभुको धरो ध्यान॥ जे मृत्यु भयें स्वर्गे सु जाय। रिद्ध अनेक उनने सुपाय॥ ५॥ जें मतिसागर इक सेठ जान। जिन रविवृत पूजा करी ठान। तिनके सुत थे परदेश माहिं। जिन अशुभ कर्म काटे सु ताहि॥ ६॥ जे रविवृत पूजन करी शेठ। ताफलकर सबसें भई भेंट। जिन जिनने प्रभुका शरन लीन। तिन रिद्धसिद्ध पाई नवीन॥ ७॥ जे रविवृत पूजा करहिं जेय। ते सुख्य अनंतानन्त लेय॥ धरनेन्द्र पद्मवति हुय सहाय। प्रभु भक्ति जान ततकाल आय॥ ८॥ पूजा विधान इहिं विध रचाय। मन वचन काय तीनों लगाय॥ जो भक्तिभाव जैमाल गाय। सोहौ सुख सम्पति अतुल पाय॥ ९॥ बाजत मृदंग वीनादि सार। गावत नाचत नाना प्रकार॥ तन नन नन नन नन ताल देत। सन नन नन सुर भर सु लेत॥ १०॥ ता थेई थेई थेई पग धरत जाय। छम छम छम छम घुघरू बजाय॥ जे करहिं विरत इहिं भांत भांत। ते लहहिं सुख्य शिवपुर सुजात॥ ११॥

दोहा॥ रविव्रत पूजा पार्श्वकी, करे भवक जन कोय। सुख सम्पति इहिं भव लहै, तुरत सुरग पद होय॥ अडिल्ल॥ रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज्य भव मन धरें। भव भवके आताप सकल छिनमें टरें॥ होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहै। सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहै॥ फेर सर्व विध पाय भक्ति प्रभु अनुसरें। नाना विध सुख भोग बहुरि शिव त्रियवरै॥

इत्यादि आशीर्वादः।

छाया तनकी नाहीं सेा होय। टमकार पलक लागे न कोय॥६॥
नख केश वृद्धि ना होंय जास। ये दश अतिशय केवल प्रकाश॥
तिनको हम बन्दें शीशनाय। भव भवके अघ छिनमें पलाय॥७॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानजन्मदशातिशयसुशोभिताय श्रीजिनाय अर्घं नि०॥

चौबोला छंद।

अब देवनकृत चौदह अतिशय, सेा सुन लीजे भाई।
सकल अरथमय मागधि भाषा, सब जीवन सुखदाई॥
मैत्रीभाव सकल जीवनके, होत महा सुखकारी।
निर्मल दिशा लसें सब ओरी, उपजें आनँद भारी॥ ८॥
अरु निर्मल आकाश विराजत, नीलवरन तन धारी।
षट् ऋतुके फल फूल मनोहर, लागे द्रमोंकी डारी।
दर्पण सम सेा धरनि तहाँकी, अति जिय आनँद पावे।
निष्कंटक मेदनि विराजे, क्यों कवि उपमा गावे॥ ९॥
मन्द सुगन्ध वयारि वृष्टि, गन्धोदककी चहुँधाई।
हरषमई सब सृष्टि विराजे, आनँद मंगलदाई॥
चरण कमल तल रचत कमल सुर, चले जात जिनराई।
मेघ कुमारोंकृत गंधोदक, वरसे अति सुखदाई॥ १०॥
चउ प्रकार सुर जय जय करते, सब जीवन मन भावे।
धर्मचक्र चले आगे प्रभुके, देखत भानु लजावे॥
दश विधि मंगलद्रव्य धरीं, तहाँ देखत मनको मोहे।
विपुल पुण्यका उदय भयेा है, सब विभूतियुत सेाहे॥११॥

दोहा।

ये चौदह देवन सु कृत, अतिशय कहे बखान।
इन युत श्रीअरहंतपद, पूजों पद सुख मान॥१२॥

ॐ ह्रीं सुरकृतचतुर्दशातिशयसंयुक्ताय श्रीजिनायअर्घं नि०॥

लक्ष्मीधरा छन्द।

प्रातिहार्य वसु जान, वृक्ष सोहे अशोक जहाँ।
पुष्पवृष्टि दिव्यध्वनि, सुर ढोरें सु चमर तहाँ॥
छत्र तीन सिंहासन, भामण्डल छवि छाजे।
बजत दुन्दुभी शब्द श्रवण, सुख हो दुख भाजे॥१३॥
ॐ ह्रीं अष्टविधिप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीजिनाय अर्घं नि०॥

चौपाई।

ज्ञानावरणी करम निवारा, ज्ञान अनन्त तवै जिन धारा॥
नाश दरशनावरणी सूरा। दरशन भयो अनन्त सु पूरा॥१४॥

दोहा।

मोह कर्मको नाशकर, पायो सुक्ख अनन्त।
अन्तरायको नाशकर, बल अनन्त प्रगटन्त॥१५॥
ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयविराजमानश्रीजिनाय अर्घं नि०॥

पाईता छन्द।

अतिशय चौंतीस बखाने। वसु प्रातिहारज शुभ जाने॥
पुन चार चतुष्टय लेवा। इन छयालिस गुण युत देवा॥१६॥
ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय श्रीजिनाय अर्घं नि०॥

## श्रीसिद्धगुण पूजा।

अडिल्ल।

दर्शन ज्ञानान्त, अनन्ता बल लहो।
सुख अनन्त विलसंत, सु सम्यक् गुण कहो॥

अवगाहन सु अगुरुलघु, अव्याबाध है।
इन वसु गुण युत सिद्ध, जजों यह साध है॥ १॥
ॐ ह्रीं अष्टगुण विशिष्टाय सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घं नि०॥

---

## श्रीआचार्य पूजा।

दोहा-आचारज आचारयुत, निज पर भेद लखन्त।
तिनके गुण षट् तीस हैं, सेा जानेा इमि सन्त॥ १॥

वेसरी छंद।

उत्तम क्षमा धरे मन माहीं। मारदव धरम मान तिहिं नाहीं॥
आरजव सरल स्वभाव सु जानेा। झूठ न कहें सत्य परमानेा।
निर्मल चित्त शौच गुण धारी। संयम गुण धारें सुखकारी॥
द्वादश विधि तप तपत महंता। त्याग करें मन वच तन संता॥
तज ममत्व आकिंचन पालें। ब्रह्मचर्य धर कर्मन टालें॥
ये दश धरम धरें गुण भारी। आचारज पूजों सुखकारी॥४॥
ॐ ह्रीं दशलाक्षणिकधर्मधारकाचार्य परमेष्ठिने अर्घं नि०॥

वेसरी छन्द।

अब द्वादश तप सुनिये भाई, अनशन ऊनेादर सुखदाई॥
व्रतपरिसंख्या रस नहिं चाहें। विविक्तशैय्यासन अवगाहें॥५॥
कायकलेश सहें दुख भारी, ये छह तप बारह गुण धारी॥
प्रायश्चित लेवें गुरु शाखें। विनयभाव निशिदिन चित्त राखें॥६॥

दोहा।

वैयावृत्य स्वाध्यायकर, कायेात्सर्ग सुजान।
ध्यान करें निज रूप को, ये बारह तप मान॥ ७॥
ॐ ह्रीं द्वादशविधितपेायुक्ताय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घं नि०॥

श्री अतिशयक्षेत्र चाँदखेड़ीजी [ कोटा ]

स्वाहा ॥ ३ ॥ फूल सुगंध सु ल्याय हरष सौ आन चढ़ायौ। रोग शोक मिट जाय मदन सब दूर पलायौ ॥ पूजौ शिखिर०। ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥ षट् रस कर नैवेद्य कनक थारी भर ल्यायो ॥ क्षुधा निवारण हेतु सु हूजौ मन हरषायो ॥ पूजौ शिखिर० ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत हो। पूजत होत स्वज्ञान मोहतम नाश हो ॥ पूजौ शिखिर०। ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥ दस विधि धूप अनूप अग्नि मैं खेवहूँ। अष्टकर्म कौ नाश होत सुख पावहू ॥ पूजौ शिखिर०। ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्योअष्टकर्मदहनाय धूपंनिर्वपामीति स्वाहा।७। भेला लौंग सुपारी श्रीफल ल्याइये। फल चढ़ाय मन वांछित फल सु पाइये ॥ पूजौ शिखिर०। ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥ जल गंधाक्षित फूल सु नेवज लीजिये। दीप धूप फल लैकर अर्घ चढ़ाइये ॥ पूजौ शिखिर०। ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥ पद्धड़ी छन्द-श्रीविंसति तीर्थंकर जिनेन्द्र। अरु हैं असंख्य बहुते मुनेंद्र ॥ तिनकौं करजोर करौं प्रणाम। तिनको पूजो तज सकल काम ॥ ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घं। दोहा-श्री सम्मेदशिखिर गिर उन्नत शोभा अधिक प्रमानैं। विंशति तिंहपर कूट मनोहर अद्भुत रचना जानौ ॥ श्री तीर्थंकर वीस तहांते शिवपुर पहुँचे जाई। तिनके पद पंकज युग पूजौ प्रत्येक अर्घ चढ़ाई। ॐ ह्रीं

अथाष्टक । छंद अष्टपदी ।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कन्चनभृंग भरौं । प्रभु वेग हरौ भवपीर, यातैं धार करौं । श्रीवीर महा अतिवीर, सनमतिनायक हो । जय वर्द्धमान गुणधीर, सनमतिदायक हो ।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिरचंदन सार, केसरसंग घसौं । प्रभु भव आताप निवार, पूजत हिय हुलसौं ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि० ॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीने थारभरी । तसु पुंज धरौं अविरुद्ध, पाऊं शिवनगरी ॥ श्रीवीर० जय वर्द्धमान ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०॥३॥

सुरतरु के सुमनसमेत, सुमन सुमन प्यारे । सो मनमथ भंजन हेत, पूजूं पद थारे ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०॥४॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थारभरी । पदजज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०॥५॥

तमखंडित मंडित नेह, दीपक जोवत हूँ । तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हूँ ॥ श्रीवीर० जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

हरिचन्दन अगर कपूर, चूरि सुगन्ध करे । तुम पदतर खेवत भूरि, आठौं कर्म जरे ॥ श्री वीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि०॥७॥

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरौं । शिव फल हित

हे जिनराय, तुम ढिग भेट धरौं ॥ श्री वीर० ॥ जयवर्द्धमान०॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥
जलफल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरौं। गुण गाऊं भवदधितार, पूजत पापहरौं ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०॥९॥

## पंचकल्यानक—राग टप्पा।

मोहि राखौ हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखौ हो सरना ॥ टेक ॥ गरभ साढ़सित छट्ट लियौ तिथि, त्रिशला उर अघहरना। सुर सुरपति तित सेव करत नित, मैं पूजूं भवतरना ॥ मोहि राखौ० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठिदिने गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा० ॥ १ ॥

जन्म चैत सित तेरस के दिन, कुंडलपुर कनवरना। सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजूं भवहरना ॥ मोहिराखौ०

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदशीदिने जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मगशिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरणा। नृप कुमारघर पारन कीना, मैं पूजूं तुम चरना। मोहि राखौ हो०॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शुकलदशै वैशाखदिवस अरि, घात चतुक छय करना। केवल लहि भवि भवसर तारे, जजूं चरन सुख भरना ॥ मोहि राखौ० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना। गनफ-निवृंद जजै तित बहु विधि,मैं पूजूं भवहरना॥मोहिराखौ०॥५॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावास्यायां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

अथ जयमाला। छंदहरिगीता ( २८ मात्रा )

गनधर असनिधर चक्रधर, हरधर गदाधर वरवदा।
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा॥
दुखहरन आनँदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं।
सुकुमाल गुन मणिमाल उन्नत, भालको जयमाल हैं॥१॥

छंद धत्तानंद ( ३१ मात्रा )

जय त्रिशलानंदन हरिकृतवंदन, जगदानंदनचंद वरं।
भवतापनिकंदन तनमनवंदन, रहितसपंदन नयन धरं॥२॥

छंद तोटक।

जय केवलभानुकलासदनं। भविकोकविकाशन कंजवनं॥
जगजीत महारिपु मोहहरं। रजज्ञानदृगांवरचूरकरं॥१॥
गर्भादिक मंगल मंडित हो। दुख दारिदको नित खंडित हो।
जगमाहि तुमी सत पंडित हो। तुमही भवभावविहंडित हो॥१॥
हरिवंससरोजनकौं रवि हो। वलवंत महंत तुमी कवि हो॥
लहि केवल धर्मप्रकाश कियौ। अवलौं सोई मारग राजतियौ॥३॥
पुनि आपतनै गुणमाहि सही। सुर मग्न रहैं जितनै सब ही।
तिनकी वनिता गुण गावत हैं। लय ताननिसों मनभावत हैं॥४॥
पुनि नाचत रंग अनेक भरी। तुव भक्तिविषै पग एम धरी।
झननं झननं झननं झननं। सुर लेत तहाँ तननं तननं॥५॥

है। सुइंद्रने उछाहसों जिनेंद्रको चढ़ाई है ॥६॥ सुमागहीं अमोल माल हाथ जोरि यानियें। जुरीं तहां चुरासि जाति रावराज जानिये॥ अनेक और भूपलोग सेठ साहु को गनें। कहालु नाम वर्णिये सुदेखते सभा बनें ॥७॥ खंडेलवाल जैसवाल अग्रवाल आइया। बघेरवाल पोरवाल देशवाल छाइया॥ सहेलवाल दिल्लिवाल सेतवाल जातिके। बघेरवाल पुष्पमाल श्री श्रीमाल पांतिके ॥८॥ सुओसवाल पल्लिवाल चूरुवाल चौसखा। पद्मावतीय पोरवाल दूसरा अठैसखा॥ गंगेरवाल बंधुराल तोर्णवाल सोहिला। करिदवाल पद्मिवाल मेडवाल खोहिला ॥९॥ लवेंचु और माहुरे महेसुरी उदार हैं। सुगोलालारे गोलापूर्व गोलहूँ सिंघार हैं॥ बंधनौर मागधी विहारवाल गूजरा। सुखंड राग होय और जानराज दूसरा ॥१०॥ भुराल और मुराल और सेरठी चितौरिया। कपोल सोमराठ वर्ग हूमड़ा नागौरिया॥ सीरीगहोड़ भंडिया कनौजिया अजोधिया। मिवाड़ मालवान और जोधड़ा समोधिया ॥११॥ सुभट्टनेर रायवल्ल नागरा रूधाकरा। सुकंथ रारु जालु रारु वालमीक भाकरा॥ पमार लाड़ चोड़ कोड़ गोड़ मोड़ संभरा। सु खंडिआत श्री खंडा चतुर्थ पंचमं भरा ॥१२॥ सु रत्नकार भोजकार नारसिंघ हैं पुरी। सु जंबूवाल और क्षेत्र ब्रह्म वैश्य लौंजुरी॥ सु आइ हैं चुरासि जाति जैनधर्मकी धनी। सबै विराजी गोठियो जु इन्द्रकी सभा बनी ॥१३॥ सुमाल लेनको अनेक भूपलोग आवहीं। सु एक एकतें सुमाग मालको बड़ावहीं॥ कहें,जु हाथ जोरि जोरि नाथ माल दीजिये। मगाय देउँ हेमरत्न सो भंडार कीजिये ॥१४॥ बघेलवाल बाँकड़ा हजार बीस देत हैं। हजार दे पचास दे पोरवार फेरि लेत हैं। सु जैसवाल लाख देत माल लेत चौंपसों। जु दिल्लिवाल,

दोय लाख देत है अगोपर्सों ॥१५॥ सु अग्रवाल बोलिये जु माल मोह दीजिये । दिनार देंहु एक लक्ष सेा गिनाय लीजिये । खँडेलवाल बोलिया जु दोय लाख देंउगेा । सुवाँटि केतमोल में जिनेन्द्रमाल लेउँगेा ॥१६॥ जु संभरी कहैं सु मेरि खानि लेहु जायकैं । सुवर्ण खानि देत हैं चितौड़िया बुलायके ॥ अनेक भूप गांव देत रायसेा चँदेरिका । खजान खेालि केाठरीं सु देत हैं अमेरिका ॥१७॥ सुगौड़वाल यों कहै गयन्द बीस लीजिये । मढ़ाय देउ हेमदन्त माल मोहि दीजिये ॥ पमार के तुरङ्ग साजि देत हैं विनागने । लगाम जीन पाहुड़े जड़ाउ हेमके बने ॥१८॥ कनौजिया कपूर देत गाड़िया भरायके । सुहीर मोति लाल देत ओशवाल आयके ॥ सु हूमड़ा हँकारहीं हमैं न माल देउगे । भराइये जिहाज में कितेक दाम लेउगे॥१९॥ कितेक लेाग आयके खड़े ते हाथ जेारकें । कितक भूप देखिके चले जु बाग मेारिकें ॥ कितेक सूम यों कहैं जु कैसै लक्षि देत हेा । लुटाय माल आपनों सु फूलमाल लेत हेा ॥२०॥ कई प्रवीन श्राविका जिनेन्द्र केा बधावहीं । कई सु कंठ रागसेां खड़ी जु माल गावहीं । कईसु नृत्यकेा करैं नहैं अनेक भावहीं । कई मृदङ्ग तालपे सु अंगको फिरावहीं ॥२१॥ कहैं गुरू उदार धी सु यों न माल पाइये ॥ कराइये जिनेन्द्र यज्ञ विंवहू भराइये ॥ चलाइये जु संघ जात संघही कहाइये । तबै अनेक पुण्यसेां अमेाल माल पाइये ॥२२॥ सँबोधि सर्व गोटिसेा गुरू उतारकैं लई । बुलाय कें जिनेंद्रमाल संघ रायकेा दई । अनेक हर्षसेा करैं जिनेंद्र तिलक पाइये । सुमाल श्रीजिनेंद्रकी विनोदीलाल गाइये ॥२३॥

दोहा ।

माल भई भगवन्तकी, पाई संग नरिन्द ।